३०५

ॐ ऐं ह्रीं क्लीं चामुण्डायै विच्चे

भगवतीमहिषासुरमर्दिनी-प्रियतमम्

भगवती महिषासुर मर्दिनी

सप्रेम भेंटः हांडा परिवार

।।ॐ ऐं ह्रीं क्लीं चामुण्डायै विच्चे।।

भगवतीमहिषासुरमर्दिनी-प्रियतमम्

(दुर्गा सप्तशती पाठ सहिता)

निर्देशक

श्री कैलास पीठाधीश्वर परमादर्श आचार्य महामण्डलेश्वर श्री १०८ स्वामी विद्यानन्द गिरि जी महाराज

वेदान्त सर्वदर्शनाचार्य

श्री कैलास - आश्रम - ब्रह्मविद्यापीठ, ऋषिकेश (उ.प्र.) २४९२०१ भारत

सम्पादक

स्वर्ण लाल तुली

देवानुग्रह त्रिदशक महोत्सव के अन्तर्गत
भगवती महिषासुरमर्दिनी देवी प्रतिष्ठा पर प्रकाशित

प्रकाशक —
कैलास विद्या प्रकाशन
कैलास आश्रम, कैलास गेट,
ऋषिकेश (उ० प्र०)

मुद्रक :
नाथ प्रिंटर्ज़
465, जोशी रोड, करोल बाग,
नई दिल्ली ✦ फोन : 3555589
7519170

प्रथम आवृत्ति २०००
१९९९

मूल्य : ५०.०० रु०

मिलने का पता :

१. श्री कैलास आश्रम, कैलास गेट, ऋषिकेश-२४९२०१
२. श्री कैलास आश्रम, उजेली, उत्तरकाशी-२४९१९३
३. श्री दशनाम संन्यास आश्रम, भूपतवाला, हरिद्वार-२४९४०१
४. श्री राम आश्रम, समानामण्डी, पटियाला-१४७१०१
५. श्री कैलासविद्यातीर्थ, ६ - भाई वीर सिंह मार्ग, नई दिल्ली - ११०००१
६. श्री कैलासधाम, नई झूँसी, इलाहाबाद - २२१५०६
७. श्री कैलास आश्रम, मॉडल टाउन, रोहतक - १२४००१
८. श्री कैलासविद्यातीर्थ गिरियक रोड़, राजगीर (नालन्दा), बिहार - ८०३११६
९. श्री कैलासविद्याधाम, कैलास नगर (रूप नगर) जम्मूतवी

ॐ

दिशन्तु शं मे गुरुपादपांसवः

सम्पादकीय

या देवी सर्वभूतेषु मातृरूपेण संस्थिता।
नमस्तस्यै।। नमस्तस्यै।। नमस्तस्यै नमो नमः।।

कैलास आश्रम ऋषिकेश एक शांकरी परम्परा ब्रह्मविद्यापीठ है जिसकी संस्थापना सन् १८८० में स्वनामधन्य श्रीमत्परमहंस परिव्राजकाचार्य श्रोत्रिय ब्रह्मनिष्ठ आचार्य महामण्डलेश्वर पूज्यपाद श्री १००८ श्री स्वामी धनराजगिरि जी महाराज ने की थी। स्वामी धनराजगिरि जी महाराज अपने समय के अद्वितीय विद्वान् एवं निष्ठावान् सन्त महापुरुष थे। उन के चरणों में बैठ कर भारत की कई दिव्यविभूतियों ने ब्रह्मविद्या का पाठ पढ़ा, जिनमें स्वामी विवेकानन्द जी, स्वामी अभेदानन्द जी, स्वामी रामतीर्थ जी आदि महापुरुष परम उल्लेखनीय हैं। स्वामी धनराजगिरि जी के बाद नौ पीठाचार्यों ने क्रमशः इस पीठ को सुशोभित किया।

कैलास आश्रम ब्रह्मविद्यापीठ के वर्तमान दशम

पीठाधीश्वर श्रीमत्परमहंस परिव्रजकाचार्य श्रोत्रिय ब्रह्मनिष्ठ परमादर्श आचार्य महामण्डलेश्वर अनन्तश्री स्वामी विद्यानन्द गिरि जी महाराज हैं। इन्होंने सन् १९६९ में पीठधीश्वर पद को संभाला जिसे अब तीस वर्ष होने जा रहे हैं और जिसके उपलक्ष्य में देवानुग्रह त्रिदशक महोत्सव मनाया जा रहा है। दशम महाराज श्री ने कैलास आश्रम का बहुत विकास हर प्रकार से किया। कई नई शाखाओं की संस्थापना भी की जिस में श्री कैलास विद्यातीर्थ, ६, भाई वीर सिंह मार्ग नई दिल्ली भगवान् आद्य शांकराचार्य स्मारक के नाम से प्रसिद्ध है। इस आश्रम का उद्घाटन सन् १९९६ में हुआ था। तब इस में भगवान् हरिहरस्वरूप, श्री आदि शंकराचार्य तथा श्री हनुमान् जी की संस्थापना हुई थी। एक वर्ष बाद १९९७ में श्री भगवत्पादेश्वर महादेव पंचायतन एवं योगेश्वर यज्ञशाला की संस्थापना हो जाने से भक्तों को बड़ी प्रसन्नता हुई। १९९८ में भगवान् गणपति की दर्शन मूर्ति की प्रतिष्ठा हुई।

देवानुग्रह त्रिदशक महोत्सव के अन्तर्गत नन्दी आरूढ भगवान् गौरी शंकर एवं भगवान् परशुराम की दर्शनीय सुन्दर मूर्तियों की स्थापना भी हुई। भगवत्प्रेरणा से

कैलास आश्रम के पुराणे भक्त एवं कैलास विद्यातीर्थ नई दिल्ली के परम सेवक श्री शिवस्वरूप हांडा जी के मन में अपनी माता श्रीमती राज रानी हांडा की पुण्य स्मृति में भगवती की प्रतिष्ठा यहाँ कराने की उत्कट अभिलाषा हुई। सच्ची लगन को भगवान् अवश्य सफल करते ही हैं। अत: श्री दशमकैलास पीठाधीश्वर जी की आज्ञानुसार यहाँ भगवती महिषासुर-मर्दिनी की प्रतिष्ठा कराने का निश्चय हुआ। जयपुर के कलाकारों द्वारा निर्मित इस दिव्य प्रतिमा की प्रतिष्ठा बसन्त पञ्चमी वि० सं० २०५५ (२२-१-१९९९) को महाराज श्री के पावन सान्निध्य में विधि विधान पूर्वक सम्पन्न हुई। भगवती महिषासुरमर्दिनी और उनेक पार्षदों-श्री हनुमान जी एवं श्री भैरों बाब के दिव्य विग्रह को देख कर भक्त नयन खूब आनन्दित हो जाते हैं। ऐसे सुन्दर स्वरूप के दर्शन कम ही मिलते हैं।

श्री कैलास पीठाधीश्वर जी महाराज की ही आज्ञा लेकर श्री शिवस्वरूप हांडा ने माँ भगवती की पूजा अर्चना सम्बन्धी एक पुस्तिका छपवाने का संकल्प भी लिया। इसका नाम महाराज श्री ने "भगवती महिषासुर-मर्दिनी-प्रियतमम्" रखा इस में भगवती

महिषासुरमर्दिनी के प्राकट्य की बड़ी रोचक कथा, दुर्गा सप्तशती आदि भगवती के स्तोत्र, आरती, पूजा विधि, तारा रानी की कथा, हनुमान चालीसादि नित्य अर्चन सामग्री एकत्रित की गई है।

आश है पाठक इस से लाभ उठाकर अपने जीवन को माँ जगदम्बा के चरणकमलों में समर्पित करेंगे,

सम्पादक

वसन्त पंचमी वि० सं० २०५५ स्वर्ण लाल तुली

२२ जनवरी १९९९

श्रीकैलास आश्रम

खेमका बन्धु

सस्य श्यामला जहाँ प्रकृति इठलाती रहती,
भागीरथी पुनीत जहाँ सुन्दरतम बहती।
जहाँ हिमालय मौन मन्द नित है मुस्काता,
अमृत भरे अथाह जहाँ मारुत गति पाता।१।

टिहरी जिला विशाल जहाँ से प्रारम्भिक है,
बहती जहाँ चन्द्रभागा सरिता लौकिक है।
हृषीकेश से वहीं दूर कुछ सुन्दर पथ पर,
आश्रम है कैलास सुशोभित अतिशय सुखकर।२।

लघुतम किन्तु विचित्र पहाड़ी पर वह आश्रम,
सदा साधना भरे और अति अतुलित संयम।
स्वान्तः सुख को सदा बिखेरा करता प्रतिपल,
ब्रह्म वेद सच्चरित साधुता का वक्षस्थल।३।

विस्तृत है अद्वैत सत्य सिद्धान्त जहाँ पर,
है निवृत्ति का केन्द्र महान विचक्षण गुरुतर
वासनादि जग के विकार से दूर-दूर है,
मोहावेश महान अन्ध अज्ञान चूर है।४।

मौन जहाँ एकान्त साधनायें होती हैं,
और त्याग का बीज जहाँ सुन्दर बोती हैं।
विश्वनाथ का वही मनोहर मन्दिर सुखकर,
शोभित है भगवान जगद्गुरु शङ्कर शङ्कर।५।

क्रमाङ्क	विषय	पृष्ठ संख्या

श्री कैलासपीठाधीश्वर परमादर्श आचार्य
महामण्डलेश्वर अनन्त श्री स्वामी विद्यानन्द गिरि जी
महाराज का

आशीर्वाद

या श्रीः स्वयं सुकृतिनां भवनेष्वलक्ष्मीः
पापात्मनां कृतधियां हृदयेषु बुद्धिः।
श्रद्धा सतां कुलजनप्रभवस्य लज्जा
तां त्वां नताः स्म परिपालय देवि विश्वम्।।

श्री कैलासविद्यातीर्थ आदि शङ्कराचार्य स्मारक नई दिल्ली में भगवती महिषासुरमर्दिनी की संस्थापना 'देवानुग्रह त्रिदशक महोत्सव' की अवधि में सम्पन्न होने वाला एक परम मंगलमय कार्य है। शिव-शक्ति के अनन्य उपासक हमारे परमप्रिय श्री शिवस्वरूप हांडा की अनेक प्रार्थना पर आश्रम में स्थान संकोच के बावजूद भी उनके इस शुभ संकल्प के लिये हमें स्वीकृति एवं आशीर्वाद देकर बड़ी प्रसन्नता हो रही है। वस्तुतः यह सब कार्य देवानुग्रह से अपने आप सम्पन्न होते जा रहे हैं। भगवती की सुन्दर पीठ पर प्रतिमा स्थापना से पूर्व ही भेंट पूजा आना प्रारम्भ हो गया था जो एक अत्यन्त शुभ लक्षण है।

इस पृथ्वी पर तनु नामक व्यक्ति थे। उसके दो पुत्र थे - रंभ और करंभ। करंभ पंचनद नदी में जल समाधि में बैठकर तथा रंभ नदी के किनारे बरगद के पेड़ के नीचे पंचाग्नि के बीच में रहकर, अपने पुत्रों को जन्म देने के लिए कठोर तप कर रहे थे। उनके कठोर तप से अनुपम पुत्र जन्म लेंगे तथा इन्द्र पदवी छिन जाने की संभावना थी। अतः इन्द्र ने मगर मच्छ बन नदी में डूबकर तप करनेवाले करंभ के पैरों को खींचकर उसे मार डाला। अन्याय से अपने भाई को मरते देख, रंभ अपने दाहिने हाथ से अपनी चोटी पकड़कर, बायें हाथ से अपना सिर काटकर अग्नि में होम करने के लिए सन्नद्ध हुआ। उसे देख अग्निदेव प्रत्यक्ष होकर बोले–

"हे असुर! तू असुरों में महामूर्ख है। आत्माहत्या महापाप है। तुझे क्या चाहिए? मुझ से माँग। मैं दूँगा।" रंभ बोला – "यदि ऐसी बात है, तो मुझे एक ऐसा पुत्र प्रदान कीजिए जिसकी देव, दानव, दैत्य, मानव आदि से मृत्यु न हो। तीनों लोकों में उसका शासन हो। पराक्रम में उसे कोई जीत न सके। उसें कामरूप याने अपनी इच्छा के अनुसार रूप बदलने का वर मिले। देखने में मन्मथ जैसा रूपवान् हो।"

अग्निदेव मनोवांछित वर देकर चले गये। रंभ लौट पड़ा।

एक दिन रंभ यक्षों से भरे अत्यंत मनोहर वन प्रदेश में गया। वहाँ उसने यक्षस्त्रियों में अत्यंत मनोहर एक स्त्री को देखा। उसे देखते ही वह यक्ष स्त्री जंगली भैंस बनकर खड़ी हो गई। उस स्त्री पर मोहित हुआ उसे भैंस के रूप में देखकर भी, कामवासना से रंभने उसके साथ संभोग किया। भैंस ने भी अत्यंत चाव से उसके साथ सुख भोगा था। फलस्वरूप भैंस गर्भिन बनी। उस भैंस को लिए वह पाताल लोक चला गया। उसे सुरक्षित रखकर, अन्य भैंसों को उसके पास फटकने नहीं दिया।

एक दिन एक भैंसा कामवासना से प्रेरित होकर भैंस के पास आया। रंभने उसे खूब पीटकर, दूर भगाया। पर भैंसे ने कुपित हो अपने सींगो से रंभ को मार डाला। तुरन्त रंभ की पत्नी बनी भैंसने वहाँ से यक्षों के उस सुन्दर वन में आ, यक्षों की शरण ली। भैंस के पीछे-पीछे भैंसा भी आ गया था। उसके ऊपर चढ़कर संभोग करने का प्रयत्न किया, पर वह भैंस उसे सींग से दूर हटाकर रंभाने लगी। उसे देख यक्षों ने भैंसे पर तीर छोड़कर उसे मार डाला। फिर भैंस मरे रंभ की यादकर आँसू बहाने लगी। उसे देख यक्ष मरे रंभ की लाश को ले आये और चिता सजाकर अग्नि से जलाया। उसे देख भैंसं ने अग्नि प्रवेश किया। यक्षों के रोकने पर भी वह भैंस रुकी

नहीं। चिता पर चढ़कर भस्म हो गई। उस अग्नि से रक्तबीज बन महिषासुर उत्पन्न हुआ, फिर उसने सब असुरों को एकत्र कर पृथ्वी पर असुर साम्राज्य की स्थापना की। वह अत्यंत पराक्रमी था। जब चाहे, वह भैंस का रूप धारण कर सकता था। वह सम्राट बन सब असुरों पर शासन करने लगा। चिक्षुर, असिलोम, महावीर्य, धनाध्यक्ष, मदोत्कट, तांब्र, विडालाक्ष, त्रिनेत्र, उतर्क, भाष्कल, बंधक, काल नामक बारह सेनापतियों की सहायता से उसने सारी पृथ्वी को अपने कब्जे में कर लिया। समस्त राजागण उस के अधीन रहते हुए कर अदा कर रहे थे।

फिर इन्द्रलोक को अपनी अधीनता में लाने एक दूत को इन्द्र के पास भेजा। दूत ने इन्द्र के पास जाकर कहा- "हे देवेंद्र! हमारे सम्राट महिषासुर की अधीनता स्वीकार कर लो, नहीं तो देवलोक छोड़कर भाग जाओ। भागना नहीं चाहता है, तो अपना वज्रायुध लेकर युद्ध करने आ जाओ। गौतम मुनि के सामने, अहल्या को बिगाड़ने के बाद मारजाट बन चला था न? तुम्हारी वीरता हम खूब जानते हैं। कई बार तुम्हारे पूर्वज असुरों से हारकर भाग चुके हैं। अतः अधीनता स्वीकार कर लो।"

इन्द्र बोला - "अरे दूत! अपनी जीभ पर लगाम लगाओ। हाँ मैं बिलाव हूँ अमृत पीता हूँ। तुम्हारा मालिक महिष

बन घास चरता है। भैंस के गर्भ से पैदा होने से उसका दिमाग भी मोटा हो गया है। अतः मेरे पास तुम्हें भेजा है। अपने मालिक से कहो कि वह युद्ध करने आ जाये। तुम दूत हो, इसलिए तुम्हें नहीं मार रहे हैं। यहाँ से भाग जाओ।"

दूत ने आकर सारी बातें बता दी। उसने तुरन्त पाताल लोक से राक्षसों की सेना का संगठन किया। "मैं अकेला उसे जीतने में समर्थ हूँ। फिर भी युद्ध है, तो सेना का आना अनिवार्य है। केवल मेरा युद्ध देखने आ जाइए। आप लोगों को युद्ध करने की आवश्यकता नहीं। मेरे लिए विशेष आयुधों की जरूरत नहीं। मेरे दो सींग ही काफी हैं। देवलोक का सुख-भोग, खुलकर भोगेंगे''। इतना कहकर वह युद्ध करने निकल पड़ा।

इधर देवेन्द्र ने सब देवों को सभा में बुलाकर युद्ध करने के संबंध में मन्त्रणा की। उस सभा में देवगुरु बृहस्पति भी आये थे। उन्होंने बताया "हे देवेन्द्र! धैर्य धारण करो। युद्ध में विजय-पराजय होती ही रहती है। स्थितप्रज्ञ बन, सुख-दुःखों से ऊपर उठकर, युद्ध करने के लिए चलो। हमारे पाप-पुण्यों के कर्मों के आधार पर विजय-पराजय मिलती है।"

देवेन्द्र युद्ध के लिए तैयारियाँ करने लगा। विष्णु, विनायक, षण्मुख आदि से मिलकर युद्धभूमि में अपनी सेना लेकर इन्द्र पहुँचा। धनुष–बाण , शूल, भाला, गदा, परशु, कुलिश, पट्टय, चक्र आदि आयुधों से दोनों की सेना घमासान युद्ध करने लगी। महिषासुर के सेनापति चिक्षुरने इन्द्र का सामना करते हुए पाँच बाणों का प्रयोग किया। इन्द्र ने उन बाणों को नष्ट कर, अर्धचन्द्र बाण का प्रयोग कर, उसके वक्षस्थल पर मारा। चिक्षुर अपने हाथी पर ही मूर्छित हो गया। उस हाथी पर इन्द्र ने वज्रायुद्ध का प्रयोग कर उसकी सूँड को काट डाला। पर वह हाथी अपने तथा अपने मालिक के प्राण बचाने के लिए सेना के बीच में दौडकर गायब हो गया।

उसे देख बिडालाक्ष ने आकर सामना किया। वह मद हाथी पर चढ़ आया और वर्षा की तरह बाणों की वर्षा करने लगा। इन्द्र ने गदा से उसके मद हाथी पर मारा। बिडालाक्ष ने उस हाथी को छोड़ दूसरे हाथी पर आ, रथ पर कूद पड़ा और रथ से बाणों की वर्षा की। इन्द्रने अपने पुत्र जयंत को आगे कर युद्ध करवाया। जयंत ने पाँच बाणों का प्रयोग किया। वह असुर रथ में ही मूर्छित हुआ। उस रथ के सारथी ने अपने मालिक को बचाने के लिए रथ को मोड़कर युद्धभूमि से चल पड़ा। उसे

देख असुर सेना होहल्ला मचाते हुए तितर-बितर हो गयी। उसे देख महिषासुर ने ताम्र को युद्ध करने भेजा। ताम्र बाणों की वर्षा करते हुए आगे बढ़ा। यम एवं वरुण, दोनों ने मिलकर उसका सामना किया। यमने अपने दण्डायुद्ध से उसके वक्ष- स्थल पर प्रहार किया। फिर भी वह बहुत देर तक युद्ध करता रहा। देवों ने भयंकर युद्ध कर उसे मूर्छित होने दिया। असुर सेना में खलबली मच गई। जान हथेली में लिए वे सब भाग गये।

उसे देख इन्द्र सामने आया। अपनी सेना को भागते देख महिषासुर ने अपनी गदा से इन्द्र की भुजा पर मारा। इन्द्र ने गदा को रोककर, अपने वज्रायुद्ध से उसकी गदा को चकनाचूर कर दिया। महिष ने तलवार का प्रयोग किया। इन्द्र ने उसे तलवार से रोका। बहुत देर तक दोनों ने कई आयुधों से एक दूसरे का सामना किया। फिर युद्ध में जीतना कठिन समझकर महिष ने एक उपाय किया। अपनी माया से हजारों की संख्या में अपने जैसा रूप वालों की सृष्टि की। देवसेना को चारों तरफ से घेरकर युद्ध करने लगा। उस 'साँबरी' माया शक्ति को देख इन्द्र चकित हुआ। फिर इन्द्र ने यम, वरुण, कुबेर एवं सूर्य को साथ लेकर एक जगह पहुँचकर विष्णु की स्तुति की। तुरन्त महाविष्णु

गरुड पर आरूढ हो आये और अपने चक्रायुध का प्रयोग कर उस माया तथा मायाजनित असुरों को दूर हटा दिया।

महिषासुर ने उसे देखकर 'परिगम्' नामक आयुध से देवों को भगाने लगा। क्षुर, भाष्कल, उग्र, अति उग्र, युद्धकाम, त्रिनेत्र, असिलोम आदि असुर सेनापतियों ने चारों ओर से देवगणों को घेरकर घमासान युद्ध किया। अंधक नामक असुर ने विषयुक्त बाणों का प्रयोग विष्णु पर किया। विष्णु ने उसका निरोध कर, तलवार, चक्र, मूसल, गदा से भयंकर युद्ध किया। यह युद्ध पचास दिनों तक चलता रहा। इन्द्र ने पुष्कल से, अग्नि महिषासुर से, यम त्रिनेत्र से, वरुण असिलोम से, कुबेर क्षुर से द्वन्द्व युद्ध करने लगे। अंधक पर अंत में विष्णु ने अपना सुदर्शन चक्र चलाया। अंधक अपने चक्रायुद्ध से उसका निरोध कर, मुर्गे की तरह बाँग लगाकर हंसी-मजाक करने लगा। उसे देवगण देख भयभीत हुए। विष्णु ने 'गोमोदकी' नामक आयुध से अंधक के ऊपर प्रहार किया। उस से वह मूर्छित हुआ। उसे देख महिषासुर ने परिगम से विष्णु के सिर पर मारा। विष्णु मूर्छित हुए। उसे देख गरुड उड़कर उन्हें युद्धभूमि से दूर ले चला। बीच में महिषासुर ने अपना महिष रूप धारण कर अपनी सींग से हजारों देवगणों को मार-मारकर, सींग से उठाकर, दूर फेंककर, युद्धभूमि में खलबली मचा दी।

साथ ही अपनी सींग से पहाड़ों को उठा-उठा कर देवों पर फेंकने लगा। विष्णु फिर से युद्ध भूमि में आये और पहाड़ों को चकनाचूर कर, महिषासुर को मारकर मूर्छित कर दिया। थोड़ी देर में उसकी मूर्छा टूटी। वहा भीमकायवाला बन वीरगर्जना करने लगा। तुरन्त विष्णु ने अपना शंख बजाकर उसे फीका कर दिया। देवगण अत्युत्साह से युद्ध करने लगे। असुरों का उत्साह कम होते देख, महिषासुर सिंह का रूप धारण कर देवगणों के वक्षस्थल पर नाखून से प्रहार करते हुए पूँछ से मारते हुए दाँतों से कुतर कर देवों का रक्त पीते हुए अति उग्र बन युद्ध करने लगा। गरुड पर नाखून से कुरेदकर, रक्त बहने दे, विष्णु के वक्षस्थाल पर घाँव कर दिया। विष्णु ने सोचा, उसके साथ युद्ध कर जीतना मुश्किल है। अतः गरुड वाहन पर चल पड़े। ब्रह्माने भी अनुभव किया कि उससे युद्ध करना असंभव है। हंस वाहन पर आरूढ हो, अपने स्थान चले गये। इन्द्र और अन्य देवगण और कुछ देर तक युद्ध करने तत्पर हुए। उनके लिए महिष रूप ही काफी समझकर, वह महिष बन युद्ध करने लगा। पहाड़ों को अपनी सींग तथा पूँछ से उठा-उठाकर फेंकने लगा। देवगण उससे बचकर नौ दो ग्यारह हो गये। देवताओं को भागते देख, महिष इन्द्र के ऐरावत को अपने कब्जे में कर उस पर चढकर इन्द्र

लोक की ओर रवान हुआ। उचैश्रव नामक घोड़ों को भी अपने अधीन कर, महिषासुर इन्द्र के सिंहासन पर बैठ गया। वहाँ की संपति को लूटकर अपने मंत्रियों के लिए उचित स्थान वहाँ दे दिया। इस तरह कई वर्ष सुखमय जीवन बिताने लगा।

एक दिन सब देवगण, ब्रह्मा, विष्णु के साथ समालोचना कर, इस निर्णय पर आये कि महिषासुर का वध एक स्त्री ही कर सकती है। अतः स्त्री शक्ति की सृष्टि संहारकर्ता शिव जी करेंगे, तो उत्तम होगा। शिव जी भी आये और बोले एक की शक्ति से महिषासुर का संहार करना कठिन है। अतः सब की शक्ति को मिलाकर एक नयी जीवी की सृष्टि करनी होगी। तुरन्त सब देवगणों से एक-एक शाक्ति आ मिली और एक तेजोमय सर्वदेवता स्वरूपिणी महाशक्ति प्रकट हुई।

ब्रह्मा से निकली शक्ति रक्तवर्णवाली, पद्मराग युक्त ठण्डक-गर्मी मिश्रित कान्तिवाली थी। विष्णु से निकली शक्ति सत्त्वगुणवाली शुभ सफेद वर्ण कांति युक्त थी। शिवजी से उत्पन्न तमोगुण शक्ति अत्यंत प्रकाशमान, अतिभयंकर, घोर स्वरूपिणी बन निकली। इन्द्र से निकली शक्ति तेजोमय तथा चित्र रूपवाली सकल गुणों से संपन्न थी। दिक्पालों से निकली शक्तियां दसरंगों से युक्त हो, रंगबिरंगी ज्वालाएँ

प्रकट कर रही थीं। सब शक्तियाँ मिलकर, प्रवाल होंठों, अंजन युक्त तीक्ष्ण सुन्दर आँखों सर्वालंकृतभूषिता हो, अठारह भुजाओं में विविध आयुध धारण कर, त्रिगुणों से युक्त होने से तिरंगी वर्णवाली बन, सारे विश्व को मोहित करनेवाली मोहिनी जैसा रूप ले, नित्य सुन्दरी बन, अनुपम शक्तिशालिनी बन प्रकट हुईं।

मुखड़े में शंकर की तेजोराशि थी। लंबे, काले, घुंघुराले बाल यम के तेज से युक्त थे। मन्मथ के बाण जैसी टेढी भौहें, तीनों नेत्र संध्या के तेज से काले, लाल एवं सफेद तेज युक्त थे। आँखों से अग्नि की तेजोराशि टपक रही थी। तिल के फूलों जैसी लंबी नाक कुबेर की तेजोराशि, सुपंक्ति बद्ध शुभ्र दाँत ब्रह्मा की तेजोराशि, निचले अधर अरुण की कांति, बाँस के जैसी लंबी भुजाओं से युक्त अठारह हस्त, विष्णु की तेजोराशि, लाल रंगवाले नाखून, अष्टवसुओं की तेजोराशि, स्तन चन्द्रकांति की तेजोराशि (पेट की) त्रिबली इन्द्र की तेजोराशि, जाँघ और पेट वरुण की तेजोराशि, पृष्टभाग भूदेवी की तेजोराशि, नितंब विपुल की तेजोराशि – इस तरह सब देवगणों की तेजोराशि उसमें आकर समा गई थी। सब देवों ने अपने-अपने आयुधों की राशि को उसके हाथ के आयुधों में पहुँचा दिया। शंकर के शूलायुध, महाविष्णु का सहस्र किरणवाला चक्र, वरुण

का शंख, अग्नि का शतग्नि अस्त्र, वायु का तूणीर युक्त धनुष-बाण, इन्द्र का वज्रायुध, यम का दण्डायुध, ब्रह्मा का गंगाजल युक्त कमंडल एवं अत्यंत मनोहर कमल पुष्पमाला, वरुण का पाश, कुबेर का मधुपूर्ण सुवर्ण कलश आदि मिला। त्वष्टा ने मणि-युक्त गौमेदकि गदायुध वज्र कवच, कई प्रकार के बाण, नूपुरादि प्रदान किये थे। विश्वकर्मा ने कंकण, भाजूबंध, नवरत्नहार तीक्ष्ण परशु प्रदान किया। विष्णु के दुग्ध सागर ने सुन्दर रंग-बिरंगे पटवस्त्र, मोती का हार, प्रकाशमान चूडामणि, कर्णफूल आदि प्रदान किये। महासमुद्र एवं रत्नाकर नामक दक्षिण सागर ने नव कण्ठहार, अंगूठी आदि दिये। ऐरावत ने ध्वनियुक्त मणि प्रदान की। हिमवान् ने सिंह वाहन प्रदान किया। देवी सबको पहनकर सिंहारूढ हो, महिषासुर से युद्ध करने निकल पड़ी। सिंह गर्जना करने लगी। देवताओं ने फूल बरसाये। महिषासुर का संहार कर, धर्म और नीति की रक्षा करने, देवों को छिना हुआ अधिकार दिलाने का वादा कर, देवी निकल पड़ी।

देवी के सौन्दर्य ने महिषासुर को मोहित कर दिया। उसने अपना दूत भेजकर, विवाह का प्रस्ताव सामने रक्खा। देवी ने कहा "यदि तुम जिंदा रहना चाहते हो, तो पाताल लोक चले जाओ। देवों का अपना-अपना राज्य सौंप दो।"

देवी को युद्ध में जीतकर लाने का वादा कर भाष्कल और दुर्मुख आये। बोले

"हे सर्वालंकृत भूषिते! यदि तुम महिषासुर को जीतना चाहती है, तो उसकी नायिका बन जाओ। उसके हृदय साम्राज्य में शयन कर सकोगी। तीनों लोकों की संपति तुम्हारे पद कमलों में लुट जाएगी। उसकी पटरानी बन विश्व पर शासन कर सकती हो। स्त्री के लिए यही उचित वीरता है। शायद तुमने सोचा होगा कि महिष रूप वाले से कैसा विवाह? तुम्हारे साथ रहते समय मन्मथ का रूप धारण करेगा। अतः आसानी से उसे जीतने का मार्ग हमने बताया है।"

"अरे कायरों! क्या एक देव कन्या भैंसे से शादी करेगी? युद्ध करने के लिए तैयार हो जाइए।"

तुरंत दोनों असुरों ने अपना-अपना धनुष लेकर बाणों का संधान किया। देवी पर भाष्कलने पाँच बाण छोड़ दिये। देवी ने उसको नष्ट कर, सात बाण छोड़े। फिर उसने सात बाण छोड़े। फिर देवी ने अर्धचन्द्र बाण का संधान कर उसके धनुष को तोड़ दिया। फिर असुर गदायुध लेकर देवी पर प्रहार करने आया, तब देवी ने अपने गदायुध से उसे मारकर नीचे गिरा दिया। एक क्षण तक वह मूर्छित

हुआ। फिर उठकर गदा लिए देवी पर टूट पड़ा। देवी ने अपने शूलायुध से उसके वक्षस्थल को भेदकर नीचे गिरा दिया। वह मर गया। उसे देख दुर्मुख अपना रथ लेकर देवी के सामने आया और बाणों की वर्षा करने लगा। देवी ने उन सबको नष्ट किया। तलवार, गदा, मूसल, तोमर आदि से क्रमबद्ध रीति से दोनों के बीच युद्ध हुआ। उस युद्ध में हजारों की संख्या में असुर सेना मरी। रक्त की नदी बहने लगी। उसमें असुरों के सिर, हाथ, अन्य अंगांग बहने लगे। उन्हें खाने के लिए रण-चील एवं गिद्ध मण्डराने लगे। फिर भी दुर्मुख लड़ता रहा। देवी ने उसका रथ तोड़ा। पाँच बाणों से उसके धनुष को तोड़ा। रथ से नीचे कूदकर गदा लेकर उसने सिंह के ऊपर मारा। देवी ने तलवार से उसका सिर काट दिया। इस तरह प्रथम दिन का युद्ध समाप्त हुआ।

दसरे दिन शिक्षु नामक असुर, तांब्र नामक असुर के साथ भारी सेना लेकर युद्धभूमि में पहुँचा। उन्हें देखकर देवी शंख बजाकर, धनुष की डोरी खींचकर वीरावेश से खडी हो गई। असुर ने बाणों की वर्षा की। उनको देवी ने अपने बाणों से नाश किया और शिक्षु के रथ के पताका को काट डाला। फिर गदायुध से देवी ने शिक्षु पर मारा। वह मूर्छित हुआ। तब तांब्रने तेजी से आ देवी

पर बाणों की वर्षा की, देवी ने उन सबको अपने बाणों से नष्ट किया। तब तक मूर्छित शिक्षु भी उठकर आ गया। दोनों असुर दो दिशाओं से बाण बरसाने लगे। देवी ने दोनों के बाणों का जवाब दिया। अति सूक्ष्म बाणों का प्रयोग कर असुर सेना को देवी मार रही थी। बाण ने कवचों को भेदकर, वक्षस्थल पर से रक्त की धाराओं को बहाया। फिर भी वे देवी से युद्ध करते रहे। तांब्र लोहे के मूसल से सिंह पर प्रहार कर, ठहाका मारकर हँसने लगा। देवी ने तलवार की तीक्ष्ण धार से उसका सिर काट डाला। फिर भी उसका धड़ भूमंडल से प्रहार करते हुए नाचता हुआ, विनोद करने लगा। फिर नीचे गिरा।

मंत्री तांब्र को मरते देख शिक्षु तलवार से देवी का सिर काटने दौड़ पड़ा। तुरन्त देवी ने पाँच बाणों का प्रयोग कर, एक बाण से तलवार पकड़े हाथ को, तीन बाणों से उसके सिर को काटकर एक बाण से धड़ को नीचे गिरा दिया। दोनों सेनापतियों को मरते देख असुर सेना में खलबली मच गई। वे किंकर्तव्यविमूढ हो, जान हथेली में लिए युद्धभूमि से भाग पड़े। इस तरह दूसरे दिन का युद्ध समाप्त हुआ।

तीसरे दिन असिलोम एवं बिडालाक्ष को भारी सेना

के साथ भेजा। पहले बिडालाक्ष देवी से युद्ध करने आया। असिलोम देवी की युद्ध नीति को दूर ही खडा होकर, देखता रहा। देवी ने तीन बाण छोड़कर उसे मार डाला। फिर असिलोम ने अपनी गदा से सिंह पर मारा। सिंह ने अपने नाखून से उसके शरीर को चीर डाला। उस सिंह पर उछलकर वह खडा हो गया और गदा से देवी को मारा। देवी ने अपनी तलवार से उसका सिर काट दिया। महिषासुर को अपने सेनापतियों के मरने की खबर मिली। वह अपने नवनूतन रथ में एक हजार खचरों को जोतकर मन्मथ जैसा रूप धारण करके युद्धभूमि में आया।

महिषासुर देवी पर बाणों की वर्षा करने लगा। उसके साथ दुर्धर और त्रिनेत्र भी आये थे। पहले देवी ने दुर्धर का वध किया। बाद में त्रिनेत्र पर देवी ने सात बाणों का संधान किया। वह मरकर धराशायी हुआ। उसे देख अंधक सामने आया। एक लोहे के मूसल से सिंह पर उसने मारा। वह सिंह उसे पंजे से मारकर, उसका सारा माँस खाने लगा। महिषासुर मूसलधार वर्षा जैसे बाणों की वर्षा करने लगा। देवी ने गदायुध से उन सबको नष्ट किया। फिर वह सिंह का रूप धारण कर युद्ध करने लगा। देवी ने सर्पबाणों को उस पर छोड़ा। तुरन्त वह हाथी का रूप धारण कर, पहाड़ों को लात मारकर देवी पर डालने लगा।

देवी ने अपने बाणों से पहाड़ों को चकनाचूर कर दिया। सिंह ने हाथी पर झपट कर, उसके मस्तक को दो टुकड़े कर दिया। तुरन्त हाथी का रूप छोड़कर, सर्प बन आया। देवी ने उसे तलवार से काटा, तो वह भी तलवार से देवी को काटने आया। फिर अपना महिष रूप धारण कर देवी से जूझने लगा। देवी चण्डी का रूप धारण कर, शूलायुध से महिषासुर को भगाने लगी। वह कई रूप धारण कर भागता गया। देवी ने अपने त्रिशूल से उसके वक्षस्थल पर मारा। वह मूर्छित हो, फिर एक क्षण में चेतकर युद्ध करने लगा। सहस्र किरणवाले चक्रायुध से देवी ने उसका सिर काट दिया। बाकी असुर गण पाताल लोक की ओर दौड़ पड़े। इस तरह तीनों लोकों का देवी ने उद्धार किया। महिषासुरमर्द्धिनी के नाम से वह प्रसिद्ध हुई।

(आभार डॉ० एस० केशवमूर्ति सप्तगिरि)

श्री महालक्ष्मी स्वरूपा श्रीमहिषासुरमर्दिनी भगवती की पूजा विधि

श्री महालक्ष्मी पूजन

आचमन प्राणायाम करके संकल्पवाक्य के अन्त में "स्थिर लक्ष्मीप्राप्त्यर्थं श्रीमहालक्ष्मीप्रीत्यर्थं सर्वारिष्टनिवृत्तिपूर्वक-सर्वाभीष्टफलप्राप्त्यर्थं आयुरारोग्यैश्वर्याभिवृद्धियर्थं व्यापारे लाभार्थञ्च गणपतिनवग्रहकलशादिपूजनपूर्वकं श्रीमहाकाली-महालक्ष्मी महासरस्वती-लेखनी कुबेरादीनां च पूजनं करिष्ये कहकर जल छोडें। पश्चात् गणपति, कलश और नवग्रहादि का पूजन करके महालक्ष्मीका पूजन करें।

ध्यान- या सा पद्मासनस्था विपुलकटितटी पद्मपत्रायताक्षी गम्भीरावर्तनाभिस्तन-भरनमिता शुभ्रवस्त्रोत्तरीया। या लक्ष्मीर्दिव्यरूपैर्मणिगणखचितैः स्ना-पिता हेमकुम्भैः सा नित्यं पद्महस्ता मम वसतु गृहे सर्वमांगल्ययुक्ता।।

आवाहन- ॐ सर्वलोकस्य जननीं शूलहस्तां त्रीलोचनाम्। सर्वदेवमयीमीशां देवीमावाहयाम्यहम्।। आवाहयामि

आसन- ॐ तप्तकाञ्चनवर्णाभं मुक्तामणिविरा-

	जितम्। अमलं कमलं दिव्यमासनं प्रतिगृह्यताम्।। आ० स०
पाद्य-	ॐ गंगादितीर्थसम्भूतं गन्धपुष्पादि-भिर्युतम्। पाद्यं ददाम्यहं देवि गृहाणाशु नमोऽस्तु ते।। पा० स०
अर्घ्य-	ॐ अष्टगन्धसमायुक्तं स्वर्णपात्रप्रपूरितम् अर्घ्यं गृहाण मद्दत्तं महालक्ष्म्यै नमोऽस्तु ते।। अ० स०
आचमन-	ॐ सर्वलोकस्य या शक्तिर्ब्रह्मविष्ण्वा-दिभिः स्तुता। दादाम्याचमनं तस्यै महालक्ष्म्यै मनोहरम्।। आ० स०
स्नान-	ॐ मन्दाकिन्याः समानीतैर्हेमाम्भोरुहै-वासितैः। स्नानं कुरुष्व देवेशि! सलिलैश्च सुगन्धिभिः।। स्नानं स० दूध, दही, घृत मधु और शर्करास्ना
पंचामृतस्नान-	ॐ पञ्चामृतसमायुक्तं जाह्नवीसलिलं शुभम्। गृहाण विश्वजननि स्नानार्थं भक्तवत्सले।। पं० स०
शुद्धोदकस्नान	ॐ तोयं तव महादेवि! कर्पूरागरुवासितम्। तीर्थेभ्यः सुसमानीतं स्नानार्थं प्रतिगृह्यताम्।। शु० स०
वस्त्र-	ॐ दिव्याम्बरं नूतनं हि क्षौमं

त्वतिमनोहरम्। दीयमानं मया देवि गृहाण जगदम्बिके।। व० स०

उपवस्त्र– ॐकञ्चुकीमुपवस्त्रं च नानारत्नैः समन्वितम्। गृहाण त्वं मया दत्तं मंगले जगदीश्वरि।। उ० स०

मधुपर्क– ॐ कापिलं दधि कुन्देन्दुधवलं मधुसंयुतम्। स्वर्णपात्रस्थितं देवि! मधुपर्कं गृहाण भोः।। म० स०

आभूषण– ॐ स्वभावसुन्दरांगायै नानादेवाश्रये शुभे। भूषणानि विचित्राणि कल्पयाम्यम- रार्चिते।। आ० स०

गन्ध– ॐ श्रीखण्डागरुकर्पूरमृगनाभिसमन्वितम्। विलेपनं गृहाणाशु नमोऽस्तु भक्तवत्सले।। गं० स०

रक्त चन्दन– ॐ रक्तचन्दनसंमिश्रं पारिजातसमुद्- भवम्। मया दत्तं गृहाणाशु चन्दनं गन्धसंयुतम्।। रक्त चं० स०

सिन्दूर– ॐ सिन्दूर रक्तवर्णं च सिन्दूरतिलकप्रिये। भक्त्या दत्तं मया देवि सिन्दूरं प्रतिगृह्यताम्।। सि० स०

कुंकुम– ॐ कुङ्कुमं कामदं दिव्यं कुङ्कुमं

कामरूपिणम्। अखण्डकामसौभाग्यं कुङ्कुमं प्रतिगृह्यताम्।।कुं० स०

अक्षत- ॐ अक्षतान्निर्मलाञ्छुद्धान् मुक्तामणिस-मन्वितान्। गृहाणेमान्महादेवि! देहि मे निर्मलां धियम्।। आ० स०

पुष्प- ॐ मन्दारपारिजाताद्याः पाटली केतकी तथा। मरुवा मोगरं चैव गृहाणाशु नमो नमः।। पु० स०

पुष्पमाला- ॐ पद्मशंखजपापुष्पैः शतपैत्रर्वि-चित्रताम्। पुष्पमालां प्रयच्छामि गृहाण त्वं सुरेश्वरि।। पु० म० स०

दूर्वा- ॐ विष्ण्वादिसर्वदेवानां प्रियां सर्वसुशोभनाम् क्षीरसागरसम्भूते दूर्वां स्वीकुरु सर्वदा।। दु० स०

अतर- ॐ स्नेह गृहाण स्नेहेन लोकेश्वरि! दयानिधे। सर्वलोकस्य जननि! ददामि स्नेहमुत्तमम्।। सु० स०

अथांगपूजा

'ॐ चपलायै नमः'। पादौपूजयामि।।१।।'ॐ चञ्चलायै नमः'। जानुनी पूजयामि।।२।। 'ॐ कमलायै नमः'। कटिं पूजयामि।।३।।'ॐ कात्यायिन्यै नमः'। नाभिं पूजयामि।।४।।

'ॐ जगन्मात्रे नमः'। जठरं पूजयामि।।५।।'ॐ विश्ववल्लभायै नमः'। वक्षःस्थलं पूज्यामि।।६।।'ॐ कमलवासिन्यै नमः'। भुजौ पूजयामि।।७।। 'ॐ पद्मकमलायै नमः'। मुखं पूजयामि।।८।। 'ॐ कमलपत्रक्ष्यै नमः'। नेत्रत्रयं पूजयामि।।९।। 'ॐ श्रियै नमः'। शिरः पूजयामि।।१०।। इत्यंगपूजा।।

अथ पूर्वादिक्रमेण अष्टदिक्षु अष्टसिद्धीः पूजयेत्

ॐ अणिम्ने नमः।।१।। ॐ महिम्ने नमः।।२।।
ॐ गरिम्णे नमः।।३।। ॐ लघिम्ने नमः।।४।।
ॐ प्राप्त्यै नमः।।५।। ॐ प्राकाम्यै नमः।।६।।
ॐ ईशितायै नमः।।७।। ॐ वशितायै नमः।।८।।

इति अष्टसिद्धि पूजनम्।

तथैवं पूर्वादि-क्रमेण अष्टलक्ष्मी-पूजनम्

ॐ आद्यलक्ष्म्यै नमः ।।१।। ॐ विद्यालक्ष्म्यै नमः।।२।।
ॐ सौभाग्यलक्ष्म्यै नमः।।३।। ॐ अमृतलक्ष्म्यै नमः।।४।।
ॐ कामलक्ष्म्यै नमः ।।५।। ॐ सत्यलक्ष्म्यै नमः।।६।।
ॐ भोगलक्ष्म्यै नमः ।।७।। ॐ योगलक्ष्म्यै नमः।।८।।

इति अष्टलक्ष्मी-पूजनम्

धूप- ॐ वनस्पतिरसौत्पन्नो गन्धाढ्यः सुमनोहरः। आघ्रेयः सर्वदेवानां धूपोऽयं प्रतिगृह्यताम्।। धूपमाघ्राः।

दीप- ॐ कार्पासवर्तिसंयुक्तं घृतयुक्तं मनोहरम्।
तमोनाशकरं दीपं गृहाण परमेश्वरि।।
दी० द० ह० प्र०

नैवेद्य- ॐ नैवेद्यं गृह्यतां देवि भक्ष्यभोज्य-
समन्वितम्। षड्रसैरन्वितं दिव्यं लक्ष्मि
देवि नमोऽस्तुते। नैवद्यं निवेदयामि। मध्य
पानीयम्।। नैवेद्य-निवेदयामि

ऋतुफल- ॐ फलेन फलितं सर्व त्रैलोक्यं
सचराचरम्। तस्मात् फलप्रदानेन पूर्णाः
सन्तु मनोरथाः।। ऋ० स०

आचमन- ॐ शीतलं निर्मलं तोयं कपूरिण सुवासितम्।
आचम्यतामिदं देवि! प्रसीद त्वं महेश्वरि।।
आ० स०

अखण्डऋतुफल- ॐ दं फलं मयाऽनीतं सरसं च निवेदितम्।
गृहाण परमेशानि प्रसीद प्रणमाम्यहम्।।
अ० ऋ० स०

ताम्बूलपूगीफल- एलालवंगकर्पूरनागपत्रादिभिर्युतम्। पूगी-
फलेन संयुक्तं ताम्बूलं प्रतिगृह्यताम् ता०
पू० स०

दक्षिणा- ॐ हिरण्यगर्भगर्भस्थं हेमबीजं विभावसोः।
अनन्तपुण्यफलदमतः शान्तिं प्रयच्छ मे।।
द० द्र० स०

प्रार्थना– ॐ सुरासुरेन्द्रादिकिरीटमौक्तिकैर्युक्तं सदा यत्तवपादपंकजम्। परावरं पातु वरं सुमंगलं नमामि भक्त्या तब कामसिद्धये।। भवानि त्वं महालक्ष्मीः सर्वकामप्रदायिनी। सुपूजिता प्रसन्नास्यान्महालक्ष्म्यै नमोऽस्तु ते।। नमस्ते सर्वदेवानां वरदासि हरिप्रिये। या गतिस्त्वत्प्रपन्नानां सा मे भूयात्त्व–दर्चनात्।।

श्रीमहाकाली–पूजन

दवात में मौली बाँधकर तथा स्वस्तिक बनाकर नीचे लिखा ध्यान करें–

ॐ मषि त्वं लेखनयुक्ता चित्रगुप्ताशयस्थिता। सदक्षराणां पत्रे च लेख्यं कुरु सदा मम। या माया प्रकृतिः शक्तिश्चण्डमुण्ड–विमर्दिनी। सा पूज्या सर्वदेवैश्च ह्यस्माकं वरदा भव।। ॐ श्रीमहाकाल्यै नमः।। पूजन करके नीचे लिखी प्रार्थना करें।

या कालिका रोगहरा सुवन्द्या वैश्यैः समस्तैर्व्यवहारदक्षैः।
जनैर्जनानां भयहारिणी च सा देवमाता मयि सौख्यदात्री।।

श्री महासरस्वती पूजन

लेखनी पूजन

कलम के मौली बाँधकर नीचे लिखा ध्यान करके पूजन करें।

ॐ शुक्लां ब्रह्मविचारसारपरमामाद्यां जगद्व्यापिनीम्।
वीण पुस्तक धारिणीमभयदां जाड्यान्धकारापहाम्।
हस्ते स्फाटिकमालिकां विदधतीं पद्मासने संस्थिताम्।
वन्दे तां परमेश्वरीं भगवतीं बुद्धिप्रदां शारदाम्।। लेखिन्यै नमः।।

पूजन करके नीचे लिखी प्रार्थना करें।

प्रार्थना- कृष्णानने द्विजिह्वे च चित्रगुप्तकरस्थिते।
सदक्षराणं पत्रे च लेख्यं कुरु सदा मम।।

वही, बसना आदि में केसर या रोली से स्वस्तिक बनाकर नीचे लिखा ध्यान करके पूजन करें।

ॐ या कुन्देन्दुतुषारहारधवला या शुभ्रवस्त्रावृता,
या वीणावरदण्ड-मण्डितकरा या श्वेतपद्मासना।
या ब्रह्माच्युतशंकरप्रभृतिभिर्देवैः सदा वन्दिता,
सा मां पातु सरस्वती भगवती निःशेषजाड्यापहा।।
ॐ वीणापुस्तकधारिण्यै नमः।।

पूजन करके नीचे लिखी प्रार्थना करें।

प्रार्थना- ॐ शारदा शारदाम्भोज वदना वदनाम्बुजे।
सर्वदा सर्वदाऽस्माकं सन्निधिं सन्निधिं क्रियात्।।

कुबेर पूजन

संदूक आदि में सिन्दूर से स्वस्तिक बनाकर आवाहन करके पूजन करें।

आवाहयामि देत त्वमिहायाहि कृपां कुरु।
कोशं वर्द्धय नित्यं त्वं परिरक्ष सुरेश्वर।।

प्रार्थना– धनाध्यक्षाय देवाय नरयानोपवेशिने।
नमस्ते राजराजाय कुबेराय महात्मने।।

तुला तथा मान पूजन

सिन्दूर से स्वस्तिक बनाकर पूजन करें। पश्चात् नीचे लिखी प्रार्थना करें।

नमस्ते सर्वदेवानां शक्तित्वे सत्यमाश्रिता।
साक्षिभूता जगद्धात्री निर्मिता विश्वयोनिना।।

दीपावली पूजन

दीपक जलाकर पात्र में रख पूजन करके नीचे लिखी प्रर्थाना करें।

भो दीप त्वं ब्रह्मरूप अन्धकारनिवारक।
इमां मया कृतां पूजां गृहणस्तेजः प्रवर्धय।।
ॐ दीपेभ्यो नमः।।

आरती– ॐ चक्षुर्दं सर्वलोकानां तिमिरस्य निवारणम्।
आर्तिक्यं कल्पितं भक्त्या गृहाण परमेश्वरि।।

अथ सप्तश्लोकी दुर्गा

शिव उवाच—

देवि त्वं भक्तसुलभे सर्वकार्यविधायिनी।
कलौ हि कार्यसिद्ध्यर्थमुपायं ब्रूहि यत्नतः।।

देव्युवाच—

शृणु देव प्रवक्ष्यामि कलौ सर्वेष्टसाधनम्।
मया तवैव स्नेहेनाप्यम्बास्तुतिः प्रकाश्यते।।

ॐ अस्य श्रीदुर्गासप्तश्लोकीस्तोत्रमन्त्रस्य नारायण ऋषिः, अनुष्टुप् छन्दः,

श्रीमहाकालीमहालक्ष्मीमहासरस्वत्यो देवताः,
श्रीदुर्गाप्रीत्यर्थं सप्तश्लोकीदुर्गापाठे विनियोगः।

ॐ ज्ञानिनामपि चेतांसि देवी भगवती हि सा।
बलादाकृष्य मोहाय महामाया प्रयच्छति।।१।।

दुर्गे स्मृता हरसि भीतिमशेषजन्तोः
स्वस्थैः स्मृता मतिमतीव शुभां ददासि।
दारिद्र्यदुःखभयहारिणि का त्वदन्या
सर्वोपकारकरणाय सदार्द्रचित्ता।।२।।

सर्वमङ्गलमङ्गल्ये शिवे सर्वार्थसाधिके।
शरण्ये त्र्यम्बके गौरि नारायणि नमोऽस्तु ते।।३।।

शरणागतदीनार्तपरित्राणपरायणे ।
सर्वस्यार्तिहरे देवि नारायणि नमोऽस्तु ते ।।४।।

सर्वस्वरूपे सर्वेशे सर्वशक्तिसमन्विते ।
भयेभ्यस्त्राहि नो देवि दुर्गे देवि नमोऽस्तु ते ।।५।।

रोगानशेषानपहंसि तुष्टा
रुष्टा तु कामान् सकलानभीष्टान् ।
त्वामाश्रितानां न विपन्नराणां
त्वामाश्रिता ह्याश्रयतां प्रयान्ति ।।६।।

सर्वाबाधाप्रशमनं त्रैलोक्यस्याखिलेश्वरि ।
एवमेव त्वया कार्यमस्मद्वैरिविनाशनम् ।।७।।

इति श्रीसप्तश्लोकी दुर्गा सम्पूर्णा ।।
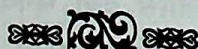
ॐ

।। श्रीदुर्गायै नमः।।

श्री दुर्गाष्टोत्तरशतनामस्तोत्रम्

ईश्वर उवाच

शतनाम प्रवक्ष्यामि शृणुष्व कमलानने।
यस्य प्रसादमात्रेण दुर्गा प्रीता भवेत् सती।।१।।

ॐ सती साध्वी भवप्रीता भवानी भवमोचनी।
आर्या दुर्गा जया चाद्या त्रिनेत्रा शूलधारिणी।।२।।

पिनाकधारिणी चित्रा चण्डघण्टा महातपाः।
मनो बुद्धिरहंकारा चित्तरूपा चिता चितिः।।३।।

सर्वमन्त्रमयी सत्ता सत्यानन्दस्वरूपिणी।
अनन्ता भाविनी भाव्या भव्याभव्या सदागतिः।।४।।

शाम्भवी देवमाता च चिन्ता रत्नप्रिया सदा।
सर्वविद्या दक्षकन्या दक्षयज्ञविनाशिनी।।५।।

अपर्णानेकवर्णा च पाटला पाटलावती।
पट्टाम्बरपरीधाना कलमञ्जीररञ्जिनी।।६।।

अमेयविक्रमा क्रूरा सुन्दरी सुरसुन्दरी।
वनदुर्गा च मातङ्गी मतङ्गमुनिपूजिता।।७।।

ब्राह्मी माहेश्वरी चैन्द्री कौमारी वैष्णवी तथा।
चामुण्डा चैव वाराही लक्ष्मीश्च पुरुषाकृतिः।।८।।

विमलोत्कर्षिणी ज्ञाना क्रिया नित्या च बुद्धिदा।
बहुला बहुलप्रेमा सर्ववाहनवाहना।।९।।

निशुम्भशुम्भहननी महिषासुरमर्दिनी।
मधुकैटभहन्त्री च चण्डमुण्डविनाशिनी।।१०।।

सर्वासुरविनाशा च सर्वदानवघातिनी।
सर्वशास्त्रमयी सत्या सर्वास्त्रधारिणी तथा।।११।।

अनेकशस्त्रहस्ता च अनेकास्त्रस्य धारिणी।
कुमारी चैककन्या च कैशोरी युवती यतिः।।१२।।

अप्रौढा चैव प्रौढा च वृद्धमाता बलप्रदा।
महोदरी मुक्तकेशी घोररूपा महाबला।।१३।।

अग्निज्वाला रौद्रमुखी कालरात्रिस्तपस्विनी।
नारायणी भद्रकाली विष्णुमाया जलोदरी।।१४।।

शिवदूती कराली च अनन्ता परमेश्वरी।
कात्यायनी च सावित्री प्रत्यक्षा ब्रह्मवादिनी।।१५।।

य इदं प्रपठेन्नित्यं दुर्गानामशताष्टकम्।
नासाध्यं विद्यते देवि त्रिषु लोकेषु पार्वति।।१६।।

धनं धान्यं सुतं जायां हयं हस्तिनमेव च।
चतुर्वर्गं तथा चान्ते लभेन्मुक्तिं च शाश्वतीम्।। १७।।

कुमारीं पूजयित्वा तु ध्यात्वा देवीं सुरेश्वरीम्।
पूजयेत् परया भक्त्या पठेन्नामशताष्टकम्।।१८।।

तस्य सिद्धिर्भवेद् देवि सर्वैः सुरवरैरपि।
राजानो दासतां यान्ति राज्यश्रियमवाप्नुयात्।।१९।।

गोरोचनालक्तककुङ्कुमेन
सिन्दूरकर्पूरमधुत्रयेण।

विलिख्य यन्त्रं विधिना विधिज्ञो
भवेत् सदा धारयते पुरारिः।।२०।।

भौमावास्यानिशामग्रे चन्द्रे शतभिषां गते।
विलिख्य प्रपठेत् स्तोत्रं स भवेत् सम्पदां पदम्।।२०।।

इति श्रीविश्वसारतन्त्रे दुर्गाष्टोत्तरशतनामस्तोत्रं समाप्तम्।

अथ देव्याः कवचम्

ॐ अस्य श्रीचण्डीकवचस्य ब्रह्मा ऋषिः, अनुष्टुप् छन्दः, चामुण्डा देवता, अङ्गन्यासोक्तमातरो बीजम् दिग्बन्धदेवतास्तत्त्वम् श्रीजगदम्बाप्रीत्यर्थे सप्तशतीपाठाङ्गत्वेन जपे विनियोगः

ॐ नमश्चण्डिकायै।।

मार्कण्डेय उवाच

ॐ यद्गुह्यं परमं लोके सर्वरक्षाकरं नृणाम्।
यन्न कस्यचिदाख्यातं तन्मे ब्रूहि पितामह।।१।।

ब्रह्मोवाच

अस्ति गुह्यतमं विप्र सर्वभूतोपकारकम्।
देव्यास्तु कवचं पुण्यं तच्छृणुष्व महामुने।।२।।

प्रथमं शैलपुत्री च द्वितीयं ब्रह्मचारिणी।
तृतीयं चन्द्रघण्टेति कूष्माण्डेति चतुर्थकम्।।३।।

पञ्चमं स्कन्दमातेति षष्ठं कात्यायनीति च।
सप्तमं कालरात्रीति महागौरीति चाष्टमम्।।४।।

नवमं सिद्धिदात्री च नवदुर्गाः प्रकीर्तिताः।
उक्तान्येतानि नामानि ब्रह्मणैव महात्मना।।५।।

अग्निना दह्यमानस्तु शत्रुमध्ये गतो रणे।
विषमे दुर्गमे चैव भयार्ताः शरणं गताः।।६।।

न तेषां जायते किंचिदशुभं रणसंकटे।
नापदं तस्य पश्यामि शोकदुःखभयं न हि।।७।।

यैस्तु भक्त्या स्मृता नूनं तेषां वृद्धिः प्रजायते।
ये त्वां स्मरन्ति देवेशि रक्षसे तान्न संशयः।।८।।

प्रेतसंस्था तु चामुण्डा वाराही महिषासना।
ऐन्द्री गजसमारूढा वैष्णवी गरुडासना।।९।।

माहेश्वरी वृषारूढा कौमारी शिखिवाहना।
लक्ष्मीः पद्मासना देवी पद्महस्ता हरिप्रिया।।१०।।

श्वेतरूपधरा देवी ईश्वरी वृषवाहना।
ब्राह्मी हंससमारूढा सर्वाभरणभूषिता।।११।।

इत्येता मातरः सर्वाः सर्वयोगसमन्विताः।
नानाभरणशोभाढ्या नानारत्नोपशोभिताः।।१२।।

दृश्यन्ते रथमारूढा देव्यः क्रोधसमाकुलाः।
शङ्खं चक्रं गदां शक्तिं हलं च मुसलायुधम्।।१३।।

खेटकं तोमरं चैव परशुं पाशमेव च।
कुन्तायुधं त्रिशूलं च शार्ङ्गमायुधमुत्तमम्।।१४।।

दैत्यानां देहनाशाय भक्तानामभयाय च।
धारयन्त्यायुधानीत्थं देवानां च हिताय वै।।१५।

नमस्तेऽस्तु महारौद्रे महाघोरपराक्रमे।
महाबले महोत्साहे महाभयविनाशिनि।।१६

त्राहि मां देवि दुष्प्रेक्ष्ये शत्रूणां भयवर्धिनि।
प्राच्यां रक्षतु मामैन्द्री आग्नेय्यामग्निदेवता।।१७।।

दक्षिणेऽवतु वाराही नैर्ऋत्यां खड्गधारिणी।
प्रतीच्यां वारुणी रक्षेद् वायव्यां मृगवाहिनी।।१८।।

उदीच्यां पातु कौमारी ऐशान्यां शूलधारिणी।
ऊर्ध्वं ब्रह्माणि मे रक्षेदधस्ताद् वैष्णवी तथा।।१९।।

एवं दश दिशो रक्षेच्चामुण्डा शववाहना।
जया मे चाग्रतः पातु विजया पातु पृष्ठतः।।२०।।

अजिता वामपार्श्वे तु दक्षिणे चापराजिता।
शिखामुद्योतिनी रक्षेदुमा मूर्ध्नि व्यवस्थिता।।२१।।

मालाधरी ललाटे च भ्रुवौ रक्षेद् यशस्विनी।
त्रिनेत्रा च भ्रुवोर्मध्ये यमघण्टा च नासिके।।२२।।

शङ्खिनी चक्षुषोर्मध्ये श्रोत्रयोर्द्वारवासिनी।
कपोलौ कालिका रक्षेत्कर्णमूले तु शांकरी।।२३।।

नासिकायां सुगन्धा च उत्तरोष्ठे च चर्चिका।
अधरे चामृतकला जिह्वायां च सरस्वती।।२४।।

दन्तान् रक्षतु कौमारी कण्ठदेशे तु चण्डिका।
घण्टिकां चित्रघण्टा च महामाया च तालुके।।२५।।

कामाक्षी चिबुकं रक्षेद् वाचं मे सर्वमङ्गला।
ग्रीवायां भद्रकाली च पृष्ठवंशे धनुर्धरी।।२६।।

नीलग्रीवा बहिःकण्ठे नलिकां नलकूबरी।
स्कन्धयोः खड्गिनी रक्षेद् बाहू मे वज्रधारिणी।।२७।।

हस्तयोर्दण्डिनी रक्षेदम्बिका चाङ्गुलीषु च।
नखाञ्छूलेश्वरी रक्षेत्कुक्षौ रक्षेत्कुलेश्वरी।।२८।।

स्तनौ रक्षेन्महादेवी मनः शोकविनाशिनी।
हृदये ललिता देवी उदरे शूलधारिणी।।२९।।

नाभौ च कामिनी रक्षेद् गुह्यं गुह्येश्वरी तथा।
पूतना कामिका मेढ्रं गुदे महिषवाहिनी।।३०।।

कट्यां भगवती रक्षेज्जानुनी विन्ध्यवासिनी।
जङ्घे महाबला रक्षेत्सर्वकामप्रदायिनी।।३१।।

गुल्फयोर्नारसिंही च पादपृष्ठे तु तैजसी।
पादाङ्गुलीषु श्री रक्षेत्पादाधस्तलवासिनी।।३२।।

नखान् दंष्ट्राकराली च केशांश्चैवोर्ध्वकेशिनी।
रोमकूपेषु कौबेरी त्वचं वागीश्वरी तथा।।३३।।

रक्तमज्जावसामांसान्यस्थिमेदांसि पार्वती।
अन्त्राणि कालरात्रिश्च पित्तं च मुकुटेश्वरी ।।३४।।

पद्मावती पद्मकोशे कफे चूडामणिस्तथा।
ज्वालामुखी नखज्वालामभेद्या सर्वसंधिषु।।३५।।

शुक्रं ब्रह्माणि मे रक्षेच्छायां छत्रेश्वरी तथा।
अंहकार मनो बुद्धिं रक्षेन्मे धर्मधारिणी।।३६।।

प्राणापानौ तथा व्यानमुदानं च समानकम्।
वज्रहस्ता च मे रक्षेत्प्राणं कल्याणशोभना।।३७।।

रसे रूपे च गन्धे च शब्दे स्पर्शे च योगिनी।
सत्त्वं रजस्तमश्चैव रक्षेन्नाराणी सदा।।३८।।

आयू रक्षतु वाराही धर्मं रक्षतु वैष्णवी।
यशः कीर्तिं च लक्ष्मीं च धनं विद्यां च चक्रिणी।।३९।।

गोत्रमिन्द्राणि मे रक्षेत्पशून्मे रक्ष चण्डिके।
पुत्रान् रक्षेन्महालक्ष्मीर्भार्यां रक्षतु भैरवी।।४०।।

पन्थानं सुपथा रक्षेन्मार्गं क्षेमकरी तथा।
राजद्वारे महालक्ष्मीर्विजया सर्वतः स्थिता।।४१।।

रक्षाहीनं तु यत्स्थानं वर्जितं कवचेन तु।
तत्सर्वं रक्ष मे देवि जयन्ती पापनाशिनी।।४२।।

पदमेकं न गच्छेतु यदीच्छेच्छुभमात्मनः।
कवचेनावृतो नित्यं यत्र यत्रैव गच्छति।।४३।।
तत्र तत्रार्थलाभश्च विजयः सार्वकामिकः।

यं यं चिन्तयते कामं तं तं प्राप्नोति निश्चितम्।
परमैश्वर्यमतुलं प्राप्स्यते भूतले पुमान्।।४४।।

निर्भयो जायते मर्त्यः संग्रामेष्वपराजितः।
त्रैलोक्ये तु भवेत्पूज्यः कवचेनावृतः पुमान्।।४५।।

इदं तु देव्याः कवचं देवानामपि दुर्लभम्।
यः पठेत्प्रयतो नित्यं त्रिसन्ध्यं श्रद्धयान्वितः।।४६।।

दैवी कला भवेत्तस्य त्रैलोक्येष्वपराजितः।
जीवेद् वर्षशतं साग्रमपमृत्युविवर्जितः।।४७।।

नश्यन्ति व्याधयः सर्वे लूताविस्फोटकादयः।
स्थावरं जङ्गमं चैव कृत्रिमं चापि यद्विषम्।।४८।।

अभिचाराणि सर्वाणि मन्त्रयन्त्राणि भूतले।
भूचराः खेचराश्चैव जलजाश्चोपदेशिकाः।।४९।।

सहजा कुलजा माला डाकिनी शाकिनी तथा।
अन्तरिक्षचरा घोरा डाकिन्यश्च महाबलाः।।५०।।

ग्रहभूतपिशाचाश्च यक्षगन्धर्वराक्षसाः।
ब्रह्मराक्षसवेतालाः कूष्माण्डा भैरवादयः।।५१।।

नश्यन्ति दर्शनात्तस्य कवचे हृदि संस्थिते।
मानोन्नतिर्भवेद् राज्ञस्तेजोवृद्धिकरं परम्।।५२।।

यशसा वर्धते सोऽपि कीर्तिमण्डितभूतले।
जपेत्सप्तशतीं चण्डीं कृत्वा तु कवचं पुरा।।५३।।

यावद्भूमण्डलं धत्ते सशैलवनकाननम्।
तावत्तिष्ठति मेदिन्यां संततिः पुत्रपौत्रिकी।।५४।।

देहान्ते परमं स्थानं यत्सुरैरपि दुर्लभम्।
प्राप्नोति पुरुषो नित्यं महामायाप्रसादतः।।५५।।

लभते परमं रूपं शिवेन सह मोदते।।ॐ।। ५६।।

इति देव्याः कवचं सम्पूर्णम्
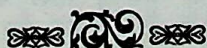
देव्याः कवचम् (अनुवाद)

ॐ चण्डिका देवीको नमस्कार है।

मार्कण्डेयजीने कहा – पितामह! जो इस संसार में परम गोपनीय तथा मनुष्यों की सब प्रकार से रक्षा करने वाला है और जो अब तक आपने दूसरे किसी के सामने प्रकट नहीं किया हो, ऐसा कोई साधन मुझे बताइये।।१।।

ब्रह्मा जी बोले – ब्रह्मन्! ऐसा साधन तो एक देवीका कवच ही है, जो गोपनीय से भी परम गोपनीय, पवित्र तथा सम्पूर्ण प्राणियों का उपकार करने वाला है। महामुने उसे श्रवण करो।।२।। देवी की नौ मर्तियाँ हैं जिन्हें 'नव दुर्गा' कहते हैं उसके पृथक-पृथक नाम बतलाये जाते है। प्रथम नाम शैलपुत्री[१] है। दूसरी मूर्तिका नाम ब्रह्मचारिणी[२] है। तीसरा स्वरूप चन्द्रघण्टा[३] के नाम से प्रसिद्ध है। चौथी मूर्तिको कूष्माण्डा[४] कहते है। पाँचवीं दुर्गाका नाम स्कन्दमाता[५] है। देवीके छठे रूपको कात्यायनी[६] कहते है। सातवाँ कालरात्रि[७] और आठवाँ स्परूप महागौरी[८] के नाम से प्रसिद्ध है। नवीं दुर्गा का नाम सिद्धिदात्री[९] है।

---

१. गिरिराज हिमालय की पुत्री पार्वती देवी यद्यपि यह सबकी अधीखरी हैं, तथापि हिमालय की तपस्या और प्रार्थना से प्रसन्न हो कृपापूर्वक उनकी पुत्री के रूप में प्रकट हुई। यह बात पुराणों में प्रसिद्ध है। २. ब्रह्म चारयितुं शीलं यस्याः सा ब्रह्मचारिणी –

सच्चिदानन्दमय ब्रह्मस्वरूप की प्राप्ति कराना जिनका स्वभाव हो, वे 'ब्रह्मचारिणी' हैं। ३. चन्द्रः घण्टायां यस्याः सा – आह्लादकारी चन्द्रमा जिनकी घण्टा में स्थित हों, उन देवीका नाम 'चन्द्रघण्टा' है। ४. कुत्सितः ऊष्मा कूष्मा – त्रिविधतापयुतः संसारः, स अण्डे मांसपेश्यामुदररूपायां यस्याः सा कूष्माण्डा। अर्थात् त्रिविध तापयुक्त संसार जिनके उदर में स्थित है, वे भगवती 'कूष्माण्डा' कहलाती हैं। ५. छान्दोग्यश्रुति के अनुसार भगवतीकी शक्ति से उत्पन्न हुए सनत्कुमारका नाम स्कन्द है। उनकी माता होने से वे 'स्कन्दमाता' कहलाती है। ६. देवताओं का कार्यसिद्ध करने के लिये देवी महर्षि कात्यायन के आश्रम पर प्रकट हुई और महर्षिने उन्हें अपनी कन्या माना, इसलिए 'कात्यायनी' नाम से उनकी प्रसिद्धि हुई। ७. सबको मारने वाले काल की भी रात्रि (विनाशिका) होने से उनका नाम 'कालरात्रि' है। ८. इन्होंने तपस्या द्वारा महान् गौर वर्ण प्राप्त किया था अतः ये महागौरी कहलायीं। ९. सिद्धि अर्थात् मोक्ष को देने वाली होने से उनका नाम सिद्धिदात्री है।

ये सब नाम सर्वज्ञ महात्मा वेद भगवान् के द्वारा ही प्रतिपादित हुए हैं।।३ – ५।। जो मनुष्य अग्नि में जल रहा हो, रणभूमि में शत्रुओं से घिर गया हो, विषम संकटमें फँस गया हो तथा इस प्रकार भयसे आतुर होकर जो भगवती दुर्गा की शरण में प्राप्त हुए हों, उनका कभी कोई अमङ्गल नहीं होता। युद्ध के समय संकट में पड़ने पर भी उनके ऊपर कोई विपत्ति नहीं दिखायी देती। उन्हें शोक, दुःख और भय की प्राप्ति नहीं होती।।६ – ७।।

जिन्होंने भक्ति पूर्वक देवी का स्मरण किया है, उनका निश्चय ही अभ्युदय होता है। देवेश्वरि! जो तुम्हारा चिन्तन करते हैं, उनकी तुम निःसंदेह रक्षा करती हो।।८।। चामुण्डा देवी प्रेतपर आरूढ़ होती हैं। वाराही भैंसे पर सवारी करती हैं। ऐन्द्री का वाहन ऐरावत हाथी है। वैष्णवी देवी गरुड़ पर ही आसन जमाती हैं।।९।। माहेश्वरी वृषभ पर आरूढ़ होती हैं। कौमारी का वाहन मयूर है। भगवान् विष्णु की प्रियतमा लक्ष्मी देवी कमल के आसन पर विराजमान हैं और हाथों में कमल धारण किये हुए हैं।।१०।। वृषभपर आरूढ़ ईश्वरी देवी ने श्वेत रूप धारण कर रखा है। ब्राह्मीदेवी हंस पर बैठी हुई हैं और सब प्रकार के आभूषणों से विभूषित हैं।।११।। इस प्रकार ये सभी माताएँ सब प्रकार की योगशक्तियों से सम्पन्न हैं। इन के सिवा और भी बहुत सी देवियाँ हैं, जो अनेक प्रकार के आभूषणों की शोभा से युक्त तथा नाना प्रकार के रत्नों से सुशोभित हैं।।१२।।

ये सम्पूर्ण देवियाँ क्रोध में भरी हुई हैं और भक्तों की रक्षा के लिये रथ पर बैठी दिखायी देती हैं। ये शङ्ख, चक्र, गदा, शक्ति, हल और मुसल, खेटक और तोमर, परशु तथा पाश, कुन्त और त्रिशूल एवं उत्तम शार्ङ्गधनुष आदि अस्त्र-शस्त्र अपने हाथों से धारण करती हैं। दैत्यों के शरीर का नाश करना, भक्तों को अभयदान देना और देवताओं का कल्याण करना – यही उनके शस्त्र-धारण का उद्देश्य है।।१३-१५।। (कवच आरम्भ करने के पहले इस प्रकार प्रार्थना करनी चाहिये –) महान् रौद्ररूप, अत्यन्त घोर पराक्रम, महान् बल और महान् उत्साहवाली देवि! तुम महान् भय का नाश करने वाली हो, तुम्हें नमस्कार है।।१६।। तुम्हारी ओर देखना

भी कठिन है। शुत्रओं का भय बढ़ाने वाली जगदम्बिके! मेरी रक्षा करो।

पूर्व दिशा में (इन्द्रशक्ति) मेरी रक्षा करे। अग्निकोण में अग्निशक्ति दक्षिण दिशा में वाराही तथा नैर्ऋत्यकोण में खड्गधारिणी मेरी रक्षा करे। पश्चिम दिशा में वारुणी और वायव्यकोण में मृग पर सवारी करने वाली देवी मेरी रक्षा करे।।१७-१८।।

उत्तरदिशा में कौमारी और ईशान-कोण में शूलधारिणी देवी रक्षा करे। ब्रह्माणि! तुम ऊपर की ओर से मेरी रक्षा करो और वैष्णवी देवी नीचे की ओर से मेरी रक्षा करे।।१९।। इसी प्रकार शव को अपना वाहन बनाने वाली चामुण्डा देवी दसो दिशाओं में मेरी रक्षा करे।

जया आगे से और विजया पीछे की ओर से मेरी रक्षा करे।।२०।। वामभाग में अजिता और दक्षिण भाग में अपराजिता रक्षा करे। उद्योतिनी शिखा की रक्षा करे। उमा मेरे मस्तक पर विराजमान होकर रक्षा करे।।२१।। ललाट में मालाधरी रक्षा करे और यशस्विनी देवी मेरी भौंहों का संरक्षण करे। भौंहों के मध्यभाग में त्रिनेत्रा और नथुनों की यमघण्टा देवी रक्षा करे।।२२।। दोनों नेत्रों के मध्यम भाग में शङ्खिनी और कानों में द्वारवासिनी रक्षा करे। कालिकादेवी कपोलों की तथा शाङ्करी भगवती कानों के मूलभाग की रक्षा करे।।२३।। नासिक में सुगंधा और ऊपर के ओठ में चर्चिका देवी रक्षा करे। नीचे के ओठ में अमृतकला तथा जिह्वा में सरस्वती देवी रक्षा करे।।२४।।

कौमारी दाँतों की और चण्डिका कण्ठप्रदेश की रक्षा करे। चित्रघण्टा गले की घाँटी की और महामाया तालु में रहकर रक्षा

करे।।२५।। कामाक्षी ठेढ़ी की और सर्वमङ्गला मेरी वाणी की रक्षा करे। भद्रकाली ग्रीवा में और धनुर्धरी पृष्ठवंश (मेरुदण्ड) में रहकर रक्षा करे।। २६।। कण्ठ के बाहरी भाग में नीलग्रीवा और कण्ठकी नली में नलकूबरी रक्षा करे। दोनों कंधों में खड्गिनी और मेरी दोनों भुजाओं की वज्रधारिणी रक्षा करे।।२७।। दोनों हाथों में दण्डिनी और अंगुलियों में अम्बिका रक्षा करे। शूलेश्वरी नखों की रक्षा करे। कुलेश्वरी कुक्षि (पेट) में रहकर रक्षा करे।।२८।।

महादेवी देनों स्तनों की और शोकविनाशिनी देवी मन की रक्षा करे। ललिता देवी हृदय में और शूलधारिणी उदर में रहकर रक्षा करे।।२९।। नाभि में कामिनी और गुह्य भाग की गुह्येश्वरी रक्षा करे। पूतना और कामिका लिङ्ग की और महिषवाहिनी गुदा की रक्षा करे।।३०।।

भगवती कटिभाग में और विन्ध्यवासिनी घुटनों की रक्षा करे। सम्पूर्ण कामनाओं को देने वाली महाबला देवी दोनों पिण्डलियों की रक्षा करे।।३१।। नारसिंही दोनों घुट्ठियों की और तैजसी देवी दोनों चरणों के पृष्ठ भाग की रक्षा करे। श्रीदेवी पैरों की अंगुलियों में और तलवासिनी पैरों के तलुओं में रहकर रक्षा करे।।३२।। अपनी दाढ़ों के कारण भयंकर दिखायी देने वाली दंष्ट्राकराली देवी नखों की और ऊर्ध्वकेशिनी देवी केशों की रक्षा करे। रोमावलियों के छिद्रों में कौबेरी और त्वचा की वागीश्वरी देवी रक्षा करे।।३३।। पार्वती देवी रक्त, मज्जा, वसा, मांस, हड्डी और मेद की रक्षा करे। आँतों की कालरात्रि और पित्त की मुकुटेश्वरी रक्षा करे।।३४।। मूलाधार आदि कमल-कोशों में पद्मावती देवी और कफ में चूडामणि देवी स्थित होकर रक्षा करे। नखके तेज की ज्वालामुखी रक्षा करे।

जिसका किसी भी अस्त्रसे भेदन नहीं हो सकता, वह अभेद्या देवी शरीर की समस्त संधियों में रहकर रक्षा करे।।३५।।

ब्रह्मणि! आप मेरे वीर्य की रक्षा करें। छत्रेश्वरी छाया की तथा धर्मधारिणी देवी मेरे अहंकार, मन और बुद्धि की रक्षा करे।।३६।। हाथ में वज्र धारण करने वाली वज्रहस्ता देवी मेरे प्राण, अपान, व्यान, उदान और समान वायु की रक्षा करे। कल्याण से शोभित होने वाली भगवती कल्याणशोभना मेरे प्राण की रक्षा करे।।३७।। रस, रूप, गन्ध, शब्द और स्पर्श – इन विषयों का अनुभव करते समय योगिनी देवी रक्षा करे तथा सत्त्वगुण, रजोगुण और तमोगुण की रक्षा सदा नारायणी देवी करे।।३८।। वाराही आयु की रक्षा करे। वैष्णवी धर्म की रक्षा करे तथा चक्रिणी (चक्र धारण करने वाली) देवी यश, कीर्ति, लक्ष्मी, धन तथा विद्या की रक्षा करे।।३९।। इन्द्राणि! आप मेरे गोत्र की रक्षा करे। चण्डिके! तुम मेरे पशुओं की रक्षा करो। महालक्ष्मी पुत्रों की रक्षा करे और भैरवी पत्नी की रक्षा करे।।४०।। मेरे पथकी सुपथा तथा मार्ग की क्षेमकरी रक्षा करे। राजा के दरबार में महालक्ष्मी रक्षा करे तथा सब ओर व्याप्त रहने वाली विजया देवी सम्पूर्ण भयों से मेरी रक्षा करे।।४१।।

देवि! जो स्थान कवच में नहीं कहा गया है, अत एव रक्षा से रहित है, वह सब तुम्हारे द्वारा सुरक्षित हो; क्योंकि तुम विजयशालिनी और पापनाशिनी हो।।४२।। यदि अपने शरीर का भला चाहे तो मनुष्य बिना कवच के कहीं एक पग भी न जाय – कवच का पाठ करके ही यात्रा करे। कवच के द्वारा सब ओर से सुरक्षित

मनुष्य जहाँ-जहाँ भी जाता है, वहाँ-वहाँ उसे धन-लाभ होता है तथा सम्पूर्ण कामनाओं की सिद्धि करने वाली विजय की प्राप्ति होती है। वह जिस-जिस अभीष्ट वस्तु का चिन्तन करता है, उस उसको निश्चय ही प्राप्त कर लेता है। वह पुरुष इस पृथ्वी पर तुलनारहित महान् ऐश्वर्य का भागी होता है।।४३-४४।। कवच से सुरक्षित मनुष्य निर्भय हो जाता है। युद्ध में उसकी पराजय नहीं होती तथा वह तीनों लोकों में पूजनीय होता है।।४५।। देवी का यह कवच देवताओं के लिये भी दुर्लभ है। जो प्रतिदिन नियम पूर्वक तीनों संध्याओं के समय श्रद्धा के साथ इसका पाठ करता है, उसे दैवी कला प्राप्त होती है तथा वह तीनों लोकों में कहीं भी पराजित नहीं होता। इतना ही नहीं, वह अपमृत्यु से[१] रहित हो सौसे भी अधिक वर्षों तक जीवित रहता है।।४६-४७।। मकरी, चेचक और कोढ़ आदि उसकी सम्पूर्ण व्याधियाँ नष्ट हो जाती हैं। कनेर, भाँग, अफीम, धतूरे आदि का स्थावर विष, साँप और बिच्छू आदि के काटने से चढ़ा-हुआ जङ्गम विष तथा अहिफेन और तेलके संयोग आदि से बननेवाला कृत्रिम विष-ये सभी प्रकार के विष दूर हो जाते हैं, उनका कोई असर नहीं होता।।४८।। इस पृथ्वी पर मारण-मोहन आदि जितने आभिचारिक प्रयोग होते हैं तथा इस प्रकार के जितने मन्त्र, यन्त्र होते हैं, वे सब इस कवच को हृदय में धारण कर लेने पर उस मनुष्य को देखते ही नष्ट हो जाते हैं। ये ही नहीं, पृथ्वी पर विचरने

---

१. अकाल-मृत्यु अथवा अग्नि, जल, बिजली एवं सर्प आदि से होने वाली मृत्यु को अपमृत्यु कहते हैं।

वाले ग्राम देवता, आकाशचारी देवविशेष, जल के सम्बन्ध से प्रकट होने वाले गण, उपदेशमात्र से सिद्ध होने वाले निम्नकोटि के देवता, अपने जन्म के साथ प्रकट होने वाले देवता, कुल देवता, माला (कण्ठमाला आदि), डाकिनी, शाकिनी, अन्तरिक्ष में विचरने वाले अत्यन्त बलवती भयानक डाकिनियाँ, ग्रह, भूत, पिशाच, यक्ष, गन्धर्व, राक्षस, ब्रह्मराक्षस, बेताल, कूष्माण्ड और भैरव आदि अनिष्टकारक देवता भी हृदय में कवच धारण किये रहने पर मनुष्य को देखते ही भाग जाते है। कवचधारी पुरुष को राजा से सम्मान वृद्धि प्राप्त होती है। यह कवच मनुष्य के तेज की वृद्धि करने वाला और उत्तम है।।४९-५२।। कवच पाठ करने वाला पुरुष अपनी कीर्ति से विभूषित भूतल पर अपने सुयशके साथ-साथ वृद्धि को प्राप्त होता है। जो पहले कवच का पाठ करके उसके बाद सप्तशती चण्डीका पाठ करता है, उसकी जब तक वन, पर्वत और काननोंसहित यह पृथ्वी टिकी रहती है, तब तक यहाँ पुत्र-पौत्र आदि संतान परम्परा बनी रहती है।।५३-५४।। फिर देहका अन्त होने पर वह पुरुष भगवती महामाया के प्रसाद से उस नित्य परमपद को प्राप्त होता है, जो देवताओं के लिये भी दुर्लभ है।।५५।। वह सुन्दर दिव्य रूप धारण करता और कल्याणमय शिव के साथ आनन्द का भागी होता है।।५६।।

अथार्गलास्तोत्रम्

ॐ अस्य श्री अर्गलास्तोत्रमन्त्रस्य विष्णुर्ऋषिः, अनुष्टुप् छन्दः, श्रीमहालक्ष्मीर्देवता, श्रीजगदम्बाप्रीतये सप्तशतीपाठाङ्गत्वेन जपे विनियोगः।।

ॐ नमश्चण्डिकायै।।

मार्कण्डेय उवाच

ॐ जयन्ती मङ्गला काली भद्रकाली कपालिनी।
दुर्गा क्षमा शिवा धात्री स्वाहा स्वधा नमोऽस्तु ते।।१।।
जय त्वं देवि चामुण्डे जय भूतार्तिहारिणि।
जय सर्वगते देवि कालरात्रि नमोऽस्तु ते।।२।।
मधुकैटभविद्राविविधातृवरदे नमः।
रूपं देहि जयं देहि यशो देहि द्विषो जहि।।३।।
महिषासुरनिर्णाशि भक्तानां सुखदे नमः।
रूपं देहि जयं देहि यशो देहि द्विषो जहि।।४।।
रक्तबीजवधे देवि चण्डमुण्डविनाशिनि।
रूपं देहि जयं देहि यशो देहि द्विषो जहि।।५।।
शुम्भस्यैव निशुम्भस्य धूम्राक्षस्य च मर्दिनि।
रूपं देहि जयं देहि यशो देहि द्विषो जहि।।६।।
वन्दिताङ्घ्रियुगे देवि सर्वसौभाग्यदायिनि।
रूपं देहि जयं देहि यशो देहि द्विषो जहि।।७।।

अचिन्त्यरूपचरिते सर्वशत्रुविनाशिनि।
रूपं देहि जयं देहि यशो देहि द्विषो जहि॥८॥

नतेभ्यः सर्वदा भक्त्या चण्डिके दुरितापहे।
रूपं देहि जयं देहि यशो देहि द्विषो जहि॥९॥

स्तुवद्भ्यो भक्तिपूर्वं त्वां चण्डिके व्याधिनाशिनि।
रूपं देहि जयं देहि यशो देहि द्विषो जहि॥१०॥

चण्डिके सततं ये त्वामर्चयन्तीह भक्तितः।
रूपं देहि जयं देहि यशो देहि द्विषो जहि॥११॥

देहि सौभाग्यमारोग्यं देहि मे परमं सुखम्।
रूपं देहि जयं देहि यशो देहि द्विषो जहि॥१२॥

विधेहि द्विषतां नाशं विधेहि बलमुच्चकैः।
रूपं देहि जयं देहि यशो देहि द्विषो जहि॥१३॥

विधेहि देवि कल्याणं विधेहि परमां श्रियम्।
रूपं देहि जयं देहि यशो देहि द्विषो जहि॥१४॥

सुरासुरशिरोरत्ननिघृष्टचरणेऽम्बिके।
रूपं देहि जयं देहि यशो देहि द्विषो जहि॥१५॥

विद्यावन्तं यशस्वन्तं लक्ष्मीवन्तं जनं कुरु।
रूपं देहि जयं देहि यशो देहि द्विषो जहि॥१६॥

प्रचण्डदैत्यदर्पघ्ने चण्डिके प्रणताय मे।
रूपं देहि जयं देहि यशो देहि द्विषो जहि॥१७॥

चतुर्भुजे चतुर्वक्त्रसंस्तुते परमेश्वरि।
रूपं देहि जयं देहि यशो देहि द्विषो जहि।।१८।।

कृष्णेन संस्तुते देवि शश्वद्भक्त्या सदाम्बिके।
रूपं देहि जयं देहि यशो देहि द्विषो जहि।।१९।।

हिमाचलसुतानाथसंस्तुते परमेश्वरि।
रूपं देहि जयं देहि यशो देहि द्विषो जहि।।२०।।

इन्द्राणीपतिसद्भावपूजिते परमेश्वरि।
रूपं देहि जयं देहि यशो देहि द्विषो जहि।।२१।।

देवि प्रचण्डदोर्दण्डदैत्यदर्पविनाशिनि।
रूपं देहि जयं देहि यशो देहि द्विषो जहि।।२२।।

देवि भक्तजनोद्दामदत्तानन्दोदयेऽम्बिके।
रूपं देहि जयं देहि यशो देहि द्विषो जहि।।२३।।

पत्नीं मनोरमां देहि मनोवृत्तानुसारिणीम्।
तारिणीं दुर्गसंसारसागरस्य कुलोद्भवाम्।।२४।।

इदं स्तोत्रं पठित्वा तु महास्तोत्रं पठेन्नरः।
स तु सप्तशतीसंख्यावरमाप्नोति सम्पदाम्।।ॐ।।२५।।

इति देव्या अर्गलास्तोत्रं सम्पूर्णम्

अथ कीलकम्

ॐ अस्य श्रीकीलकमन्त्रसय शिव ऋषिः, अनुष्टुप् छन्दः, श्रीमहासरस्वती देवता, श्रीजगदम्बाप्रीत्यर्थं सप्तशतीपाठाङ्गत्वेन जपे विनियोगः।

ॐ नमश्चण्डिकायै।।

मार्कण्डेय उवाच

ॐ विशुद्धज्ञानदेहाय त्रिवेदीदिव्यचक्षुषे।
श्रेयःप्राप्तिनिमित्ताय नमः सोमार्धधारिणे।।१।।
सर्वमेतद्विजानीयान्मन्त्राणामभिकीलकम्।
सोऽपि क्षेममवाप्नोति सततं जाप्यतत्परः।।२।।
सिद्ध्यन्त्युच्चाटनादीनि वस्तूनि सकलान्यपि।
एतेन स्तुवतां देवी स्तोत्रमात्रेण सिद्ध्यति।।३।।
न मन्त्रो नौषधं तत्र न किञ्चिदपि विद्यते।
विना जाप्येन सिद्ध्येत सर्वमुच्चाटनादिकम्।।४।।
समग्राण्यपि सिद्ध्यन्ति लोकशङ्कामिमां हरः।
कृत्वा निमन्त्रयामास सर्वमेवमिदं शुभम्।।५।।
स्तोत्रं वै चण्डिकायास्तु तच्च गुप्तं चकार सः।
समाप्तिर्न च पुण्यस्य तां यथावन्नियन्त्रणाम्।।६।।
सोऽपि क्षेममवाप्नोति सर्वमेवं न संशयः।
कृष्णायां वा चतुर्दश्यामष्टम्यां वा समाहितः।।७।।

ददाति प्रतिगृह्णाति नान्यथैषा प्रसीदति।
इत्थंरूपेण कीलेन महादेवेन कीलितम्।।८।।
यो निष्कीलां विधायैनां नित्यं जपति संस्फुटम्।
स सिद्धः स गणः सोऽपि गन्धर्वो जायते नरः।।९।।
न चैवाप्यटतस्तस्य भयं क्वापीह जायते।
नापमृत्युवशं याति मृतो मोक्षमवाप्नुयात्।।१०।।
ज्ञात्वा प्रारभ्य कुर्वीत न कुर्वाणो विनश्यति।
ततो ज्ञात्वैव सम्पन्नमिदं प्रारभ्यते बुधैः।।११।।
सौभाग्यादि च यत्किञ्चिद् दृश्यते ललनाजने।
तत्सर्वं तत्प्रसादेन तेन जाप्यमिदं शुभम्।।१२।।
शनैस्तु जप्यमानेऽस्मिन् स्तोत्रे सम्पत्तिरुच्चकैः।
भवत्येव समग्रापि ततः प्रारभ्यमेव तत्।।१३।।
ऐश्वर्यं यत्प्रसादेन सौभाग्यारोग्यसम्पदः।
शत्रुहानिः परो मोक्षः स्तूयते सा न किं जनैः।।ॐ।।१४।।

इति देव्याः कीलकस्तोत्रं सम्पूर्णम्

अथ श्रीदुर्गासप्तशती

प्रथमोऽध्यायः

मेधा ऋषिका राजा सुरथ और समाधिको भवगतीकी महिमा बताते हुए मधु-कैटभ-वधका प्रसङ्ग सुनाना

विनियोगः

ॐ प्रथमचरित्रस्य ब्रह्मा ऋषिः, महाकाली देवता, गायत्री छन्दः, नन्दा शक्तिः, रक्तदन्तिका बीजम्, अग्निस्तत्त्वम्, ऋग्वेदः स्वरूपम्, श्रीमहाकालीप्रीत्यर्थे प्रथमचरित्रजपे विनियोगः।

ध्यानम्

खड्गं चक्रगदेषुचापपरिघाञ्छूलं भुशुण्डीं शिरः
शङ्खं संदधतीं करैस्त्रिनयनां सर्वाङ्गभूषावृताम्।
नीलाश्मद्युतिमास्यपाददशकां सेवे महाकलिकां
यामस्तौत्स्वपिते हरौ कमलजो हन्तुं मधुं कैटभम्।।१।।

ॐ नमश्चण्डिकायै

'ॐ' ऐं मार्कण्डेय उवाच।।१।।

सावर्णिः सूर्यतनयो यो मनुः कथ्यतेऽष्टमः।
निशामय तदुत्पत्तिं विस्तराद् गदतो मम।।२।।

महामायानुभावेन यथा मन्वन्तराधिपः।
स बभूव महाभागः सावर्णिस्तनयो रवेः।।३।।

स्वारोचिषेऽन्तरे पूर्वं चैत्रवंशसमुद्भवः।
सुरथो नाम राजाभूत्समस्ते क्षितिमण्डले।।४।।

तस्य पालयतः सम्यक् प्रजाः पुत्रानिवौरसान्।
बभूवुः शत्रवो भूपाः[१] कोलाविध्वंसिनस्तदा।।५।।

तस्य तैरभवद् युद्धमतिप्रबलदण्डिनः।
न्यूनैरपि स तैर्युद्धे कोलाविध्वंसिभिर्जितः।।६।।

ततः स्वपुरमायातो निजदेशाधिपोऽभवत्।
आक्रान्तः स महाभागस्तैस्तदा प्रबलारिभिः।।७।।

अमात्यैर्बलिभिर्दुष्टैर्दुर्बलस्य दुरात्मभिः।
कोशो बलं चापहृतं तत्रापि स्वपुरे ततः।।८।।

ततो मृगयाव्याजेन हृतस्वाम्यः स भूपतिः।
एकाकी हयमारुह्य जगाम गहनं वनम्।।९।।

---

१. 'कोलाविध्वंसी' का किसी विशेष कुलके क्षत्रियों की संज्ञा है। दक्षिण में 'कोला' नगरी प्रसिद्ध है, वह प्राचीन काल में राजधानी थी। जिन क्षत्रियों ने उस पर आक्रमण करके उसका विध्वंस किया, वे 'कोलाविध्वंसी' कहलाये।

स तत्राश्रममद्राक्षीद् द्विजवर्यस्य मेधसः।
प्रशान्तश्वापदाकीर्णं मुनिशिष्योपशोभितम्।।१०।।

तस्थौ कंचित्स कालं च मुनिना तेन सत्कृतः।
इतश्चेतश्च विचरंस्तस्मिन्मुनिवराश्रमे।।११।।

सोऽचिन्तयत्तदा तत्र ममत्वाकृष्टचेतनः[1]।
मत्पूर्वैः पालितं पूर्वं मया हीनं पुरं हि तत्।।१२।।

मद्भृत्यैस्तैरसद्वृत्तैर्धर्मतः पाल्यते न वा।
न जाने स प्रधानो मे शूरहस्ती सदामदः।।१३।।

मम वैरिवशं यातः कान् भोगानुपलप्स्यते।
ये ममानुगता नित्यं प्रसादधनभोजनैः।।१४।।

अनुवृत्तिं ध्रुवं तेऽद्य कुर्वन्त्यन्यमहीभृताम्।
असम्यग्व्ययशीलैस्तैः कुर्वद्भिः सततं व्ययम्।।१५।।

संचितः सोऽतिदुःखेन क्षयं कोशो गमिष्यति।
एतच्चान्यच्च सततं चिन्तयामास पार्थिवः।।१६।।

तत्र विप्राश्रमाभ्याशे वैश्यमेकं ददर्श सः।
स पृष्टस्तेन कस्त्वं भो हेतुश्चागमनेऽत्र कः।।१७।।

सशोक इव कस्मात्त्वं दुर्मना इव लक्ष्यसे।
इत्याकर्ण्य वचस्तस्य भूपतेः प्रणयोदितम्।।१८।।

प्रत्युवाच स तं वैश्यः प्रश्रयावनतो नृपम्।।१९।।

---

१. पाठान्तर — ममत्वाकृष्टमानसः।

वैश्य उवाच।।२०।।

समाधिर्नाम वैश्योऽहमुत्पन्नो धनिनां कुले।।२१।।

पुत्रदारैर्निरस्तश्च धनलोभादसाधुभिः।
विहीनश्च धनैर्दारैः पुत्रैरादाय मे धनम्।।२२।।

वनमभ्यागतो दुःखी निरस्तश्चाप्तबन्धुभिः।
सोऽहं न वेद्मि पुत्राणां कुशलाकुशलात्मिकाम्।।२३।।

प्रवृत्तिं स्वजनानां च दाराणां चात्र संस्थितः।
किं नु तेषां गृहे क्षेममक्षेमं किं नु साम्प्रतम्।।२४।।

कथं ते किं नु सद्वृत्ता दुर्वृत्ता किं नु मे सुताः।।२५।।

राजोवाच।।२६।।

यैर्निरस्तो भवाँल्लुब्धैः पुत्रदारादिभिर्धनैः।।२७।।

तेषु किं भवतः स्नेहमनुबध्नाति मानसम्।।२८।।

वैश्य उवाच।।२९।।

एवमेतद्यथा प्राह भवानस्मद्गतं वचः।।३०।।

किं करोमि न बध्नाति मम निष्ठुरतां मनः।
यैः संत्यज्य पितृस्नेहं धनलुब्धैर्निराकृतः।।३१।।

पतिस्वजनहार्दं च हार्दि तेष्वेव मे मनः।
किमेतन्नाभिजानामि जानन्नपि महामते।।३२।।

यत्प्रेमप्रवणं चित्तं विगुणेष्वपि बन्धुषु।
तेषां कृते मे निःश्वासो दौर्मनस्यं च जायते।।३३।।

करोमि किं यन्न मनस्तेष्वप्रीतिषु निष्ठुरम्।।३४।।

मार्कण्डेय उवाच।।३५।।

ततस्तौ सहितौ विप्र तं मुनिं समुपस्थितौ।।३६।।
समाधिर्नाम वैश्योऽसौ स च पार्थिवसत्तमः।
कृत्वा तु तौ यथान्यायं यथार्हं तेन संविदम्।।३७।।
उपविष्टौ कथाः काश्चिच्चक्रतुर्वैश्यपार्थिवौ।।३८।।

राजोवाच।।३९।।

भगवंस्त्वामहं प्रष्टुमिच्छाम्येकं वदस्व तत्।।४०।।
दुःखाय यन्मे मनसः स्वचित्तायत्ततां विना।
ममत्वं गतराज्यस्य राज्याङ्गेष्वखिलेष्वपि।।४१।।
जानतोऽपि यथाज्ञस्य किमेतन्मुनिसत्तम।
अयं च निकृतः[1] पुत्रैर्दारैर्भृत्यैस्तथोज्झितः।।४२।।
स्वजनेन च संत्यक्तस्तेषु हार्दी तथाप्यति।
एवमेष तथाहं च द्वावप्यत्यन्तदुःखितौ।।४३।।
दृष्टदोषेऽपि विषये ममत्वाकृष्टमानसौ।
तत्किमेत[2]न्महाभाग यन्मोहो ज्ञानिनोरपि।।४४।।
ममास्य च भवत्येषा विवेकान्धस्य मूढता।।४५।।

---

१. पा० — निष्कृतः।

२. पा० — तत्केनैत०।

ऋषिरुवाच।।४६।।

ज्ञानमस्ति समस्तस्य जन्तोर्विषयगोचरे।।४७।।

विषय[1]श्च महाभाग याति[2]चैवं पृथक् पृथक्।
दिवान्धाः प्राणिनः केचिद्रात्रावन्धास्तथापरे।।४८।।

केचिद्दिवा तथा रात्रौ प्राणिनस्तुल्यदृष्टयः।
ज्ञानिनो मनुजाः सत्यं किं[3]तु ते न हि केवलम्।।४९।।

यतो हि ज्ञानिनः सर्वे पशुपक्षिमृगादयः।
ज्ञानं च तन्मनुष्याणां यत्तेषां मृगपक्षिणाम्।।५०।।

मनुष्याणां च यत्तेषां तुल्यमन्यत्तथोभयोः।
ज्ञानेऽपि सति पश्यैतान् पतङ्गाञ्छावचञ्चुषु।।५१।।

कणमोक्षादृतान्मोहात्पीड्यमानानपि क्षुधा।
मानुषा मनुजव्याघ्र साभिलाषाः सुतान् प्रति।।५२।।

लोभात्प्रत्युपकाराय नन्वेता[4]न् किं न पश्यसि।
तथापि ममतावर्त्ते मोहगर्तें निपातिताः।।५३।।

महामायाप्रभावेण संसारस्थितिकारिणा[5]।
तन्नात्र विस्मयः कार्यो योगनिद्रा जगत्पतेः।।५४।।

महामाया हरेश्चैषा[6] तया सम्मोह्यते जगत्।
ज्ञानिनामपि चेतांसि देवी भगवती हि सा।।५५।।

---

१. पा० – याश्च। २. पा० – यान्ति। ३ पा० – किंनुते।
४. पा० – नन्वेते। ५. पा० – रिणः। ६. पा० – चैतत्।

बलादाकृष्य मोहाय महामाया प्रयच्छति।
तया विसृज्यते विश्वं जगदेतच्चराचरम्।।५६।।
सैषा प्रसन्ना वरदा नृणां भवति मुक्तये।
सा विद्या परमा मुक्तेर्हेतुभूता सनातनी।।५७।।
संसारबन्धहेतुश्च सैव सर्वेश्वरेश्वरी।।५८।।

राजोवाच।।५९।।

भगवन् का हि सा देवी महामायेति यां भवान्।।६०।।
ब्रवीति कथमुत्पन्ना सा कर्मास्याश्च[1] किं द्विज।
यत्प्रभावा[2]च सा देवी यत्स्वरूपा यदुद्भवा।।६१।।
तत्सर्वं श्रोतुमिच्छामि त्वत्तो ब्रह्मविदां वर।।६२।।

ऋषिरुवाच।।६३।।

नित्यैव सा जगन्मूर्तिस्तया सर्वमिदं ततम्।।६४।।
तथापि तत्समुत्पत्तिर्बहुधा श्रूयतां मम।
देवानां कार्यसिद्ध्यर्थमाविर्भवति सा यदा।।६५।।
उत्पन्नेति तदा लोके सा नित्याप्यभिधीयते।
योगनिद्रां यदा विष्णुर्जगत्येकार्णवीकृते।।६६।।
आस्तीर्य शेषमभजत्कल्पान्ते भगवान् प्रभुः।
तदा द्वावसुरौ घोरौ विख्यातौ मधुकैटभौ।।६७।।

---

१. पा० – कर्म चास्याश्च। २. पा० – यत्स्वभावा।

विष्णुकर्णमलोद्भूतौ हन्तुं ब्रह्माणमुद्यतौ।
स नाभिकमले विष्णो स्थितो ब्रह्मा प्रजापतिः।।६८।।

दृष्ट्वा तावसुरौ चोग्रौ प्रसुप्तं च जनार्दनम्।
तुष्टाव योगनिद्रां तामेकाग्रहृदयस्थितः।।६९।।

विबोधनार्थाय हरेर्हरिनेत्रकृतालयाम्[1]।
विश्वेश्वरीं जगद्धात्रीं स्थितिसंहारकारिणीम्।।७०।।

निद्रां भगवतीं विष्णोरतुलां तेजसः प्रभुः।।७१।।

ब्रह्मोवाच।।७२।।

त्वं स्वाहा त्वं स्वधा त्वं हि वषट्कारः स्वरात्मिका।।७३।।

सुधा त्वमक्षरे नित्ये त्रिधा मात्रात्मिका स्थिता।
अर्धमात्रास्थिता नित्या यानुच्चार्या विशेषतः।।७४।।

त्वमेव संध्या सावित्री त्वं देवि जननी परा।
त्वयैतद्धार्यते विश्वं त्वयैतत्सृज्यते जगत्।।७५।।

त्वयैतत्पाल्यते देवि त्वमत्स्यन्ते च सर्वदा।
विसृष्टौ सृष्टिरूपा त्वं स्थितिरूपा च पालने।।७६।।

तथा संहृतिरूपान्ते जगतोऽस्य जगन्मये।
महाविद्या महामाया महामेधा महास्मृतिः।।७७।।

---

१. किसी-किसी प्रति में इसके बाद ही 'ब्रह्मोवाच' है। तथा 'निद्रां भगवती' इस श्लोकार्धके स्थान में – 'स्तौमि निद्रां भगवतीं विष्णोरतुलतेजसः।।' ऐसा पाठ है।

महामोहा च भवती महादेवी महासुरी[१]।
प्रकृतिस्त्वं च सर्वस्य गुणत्रयविभाविनी।।७८।।

कालरात्रिर्महारात्रिर्मोहरात्रिश्च दारुणा।
त्वं श्रीस्त्वमीश्वरी त्वं ह्रीस्त्वं बुद्धिर्बोधलक्षणा।।७९।।

लज्जा पुष्टिस्तथा तुष्टिस्त्वं शान्तिः क्षान्तिरेव च।
खड्गिनी शूलिनी घोरा गदिनी चक्रिणी तथा।।८०।।

शङ्खिनी चापिनी बाणभुशुण्डीपरिघायुधा।
सौम्या सौम्यतराशेषसौम्येभ्यस्त्वतिसुन्दरी।।८१।।

परापराणां परमा त्वमेव परमेश्वरी।
यच्च किंचित्क्वचिद्वस्तु सदसद्वाखिलात्मिके।।८२।।

तस्य सर्वस्य या शक्तिः सा त्वं किं स्तूयसे तदा[२]।
यया त्वया जगत्स्रष्टा जगत्पात्यत्ति[३] यो जगत्।।८३।।

सोऽपि निद्रावशं नीतः कस्त्वां स्तोतुमिहेश्वरः।
विष्णुः शरीरग्रहणमहमीशान एव च।।८४।।

कारितास्ते यतोऽतस्त्वां कः स्तोतुं शक्तिमान् भवेत्।
सा त्वमित्थं प्रभावैः स्वैरुदारैर्देवि संस्तुता।।८५।।

मोहयैतो दुराधर्षावसुरौ मधुकैटभौ।
प्रबोधं च जगत्स्वामी नीयतामच्युतो लघु।।८६।।

---

१. पा० — महेश्वरी। २. पा० — मया। ३. पा० — पातात्ति।

बोधश्च क्रियतामस्य हन्तुमेतौ महासुरौ ।।८७।।

ऋषिरुवाच।।८८।।

एवं स्तुता तदा देवी तामसी तत्र वेधसा।।८९।।
विष्णोः प्रबोधनार्थाय निहन्तुं मधुकैटभौ।
नेत्रास्यनासिकाबाहुहृदयेभ्यस्तथोरसः ।।९०।।
निर्गम्य दर्शने तस्थौ ब्रह्मणोऽव्यक्तजन्मनः।
उत्तस्थौ च जगन्नाथस्तया मुक्तो जनार्दनः।।९१।।
एकार्णवेऽहिशयनात्ततः स ददृशे च तौ।
मधुकैटभौ दुरात्मानावतिवीर्यपराक्रमौ।।९२।।
क्रोधरक्तेक्षणा[1]वत्तुं ब्रह्माणं जनितोद्यमौ।
समुत्थाय ततस्ताभ्यां युयुधे भगवान् हरिः।।९३।।
पञ्चवर्षसहस्राणि बाहुप्रहरणो विभुः।
तावप्यतिबलोन्मत्तौ महामायाविमोहितौ।।९४।।
उक्तवन्तौ वरोऽस्मत्तो व्रियतामिति केशवम्।।९५।।

श्रीभगवानुवाच।।९६।।

भवेतामद्य मे तुष्टौ मम वध्यावुभावपि।।९७।।
किमन्येन वरेणात्र एतावद्धि वृतं मम[2]।।९८।।

ऋषिरुवाच।।९९।।

१. पा० – णौ हन्तुं। २. पा० – मया।

वञ्चिताभ्यामिति तदा सर्वमापोमयं जगत्।।१००।।

विलोक्य ताभ्यां गदितो भगवान् कमलेक्षणः[1]।
आवां जहि न यत्रोर्वी सलिलेन परिप्लुता।।१०१।।

ऋषिरुवाच।।१०२।।

तथेत्युक्त्वा भगवता शङ्खचक्रगदाभृता।
कृत्वा चक्रेण वै च्छिन्ने जघने शिरसी तयोः।।१०३।।

एवमेषा समुत्पन्ना ब्रह्मणा संस्तुता स्वयम्।
प्रभावमस्या देव्यास्तु भूयः शृणु वदामि ते।।ऐं ॐ।।१०४।।

इति श्रीमार्कण्डेयपुराणे सावर्णिके मन्वन्तरे देवीमाहात्म्ये मधुकैटभवधो नाम प्रथमोऽध्यायः।।१।।

उवाच १४, अर्धश्लोकाः २४, श्लोकाः ६६,

एवमादितः।।१०४।।

---

१. मार्कण्डेयपुराण की कई प्रतियों में यहाँ

'प्रीतौ स्वस्तव युद्धेन श्लाघ्यस्त्वं मृत्युरावयोः।' इतना अधिक पाठ है।

द्वितीयोऽध्यायः

देवताओं के तेज से देवी का प्रादुर्भाव और महिषासुर की सेना का वध

विनियोगः

ॐ मध्यमचरित्रस्य विष्णुर्ऋषिः, महालक्ष्मीर्देवता, उष्णिक् छन्दः, शाकम्भरी शक्तिः, दुर्गा बीजम्, वायुस्तत्त्वम्, यजुर्वेदः स्वरूपम्, श्रीमहालक्ष्मीप्रीत्यर्थं मध्यमचरित्रजपे विनियोगः।

ध्यानम्

ॐ अक्षस्त्रक्परशुं गदेषुकुलिशं पद्मं धनुष्कुण्डिकां
दण्डं शक्तिमसिं च चर्म जलजं घण्टां सुराभाजनम्।
शूलं पाशसुदर्शने च दधतीं हस्तैः प्रसन्नाननां
सेवे सैरिभमर्दिनीमिह महालक्ष्मीं सरोजस्थिताम्।।

'ॐ ह्रीं' ऋषिरुवाच।।१।।

देवासुरमभूद्युद्धं पूर्णमब्दशतं पुरा।
महिषेऽसुराणामधिपे देवानां च पुरन्दरे।।२।।
तत्रासुरैर्महावीर्यैर्देवसैन्यं पराजितम्।
जित्वा च सकलान् देवानिन्द्रोऽभून्महिषासुरः।।३।।
ततः पराजिता देवाः पद्मयोनिं प्रजापतिम्।
पुरस्कृत्य गतास्तत्र यत्रेशगरुडध्वजौ।।४।।

यथावृत्तं तयोस्तद्वन्महिषासुरचेष्टितम्।
त्रिदशाः कथयामासुर्देवाभिभवविस्तरम्।।५।।

सूर्येन्द्राग्न्यनिलेन्दूनां यमस्य वरुणस्य च।
अन्येषां चाधिकारान् स स्वयमेवाधितिष्ठति।।६।।

स्वर्गान्निराकृताः सर्वे तेन देवगणा भुवि।
विचरन्ति यथा मर्त्या महिषेण दुरात्मना।।७।।

एतद्वः कथितं सर्वममरारिविचेष्टितम्।
शरणं वः प्रपन्नाः स्मो वधस्तस्य विचिन्त्यताम्।।८।।

इत्थं निशम्य देवानां वचांसि मधुसूदनः।
चकार कोपं शम्भुश्च भ्रुकुटीकुटिलाननौ।।९।।

ततोऽतिकोपपूर्णस्य चक्रिणोवदनात्ततः।
निश्चक्राम महत्तेजो ब्रह्मणः शंकरस्य च।।१०।।

अन्येषां चैव देवानां शक्रादीनां शरीरतः।
निर्गतं सुमहत्तेजस्तच्चैक्यं समगच्छत।।११।।

अतीव तेजसः कूटं ज्वलन्तमिव पर्वतम्।
ददृशुस्ते सुरास्तत्र ज्वालाव्याप्तदिगन्तरम्।।१२।।

अतुलं तत्र तत्तेजः सर्वदेवशरीरजम्।
एकस्थं तदभून्नारी व्याप्तलोकत्रयं त्विषा।।१३।।

यदभूच्छाम्भवं तेजस्तेनाजायत तन्मुखम्।
याम्येन चाभवन् केशा बाहवो विष्णुतेजसा।।१४।।

सौम्येन स्तनयोर्युग्मं मध्यं चैन्द्रेण चाभवत्।
वारुणेन च जङ्घोरू नितम्बस्तेजसा भुवः।।१५।।

ब्रह्मणस्तेजसा पादौ तदङ्गुल्योऽर्कतेजसा।
वसूनां च कराङ्गुल्यः कौबेरेण च नासिका।।१६।।

तस्यास्तु दन्ताः सम्भूताः प्राजापत्येन तेजसा।
नयनत्रितयं जज्ञे तथा पावकतेजसा।।१७।।

भ्रुवौ च संध्ययोस्तेजः श्रवणावनिलस्य च।
अन्येषां चैव देवानां सम्भवस्तेजसां शिवा।।१८।।

ततः समस्तदेवानां तेजोराशिसमुद्भवाम्।
तां विलोक्य मुदं प्रापुरमरा महिषार्दिताः[1]।।१९।।

शूलं शूलाद्विनिष्कृष्य ददौ तस्यै पिनाकधृक्।
चक्रं च दत्तवान् कृष्णः समुत्पाद्य[2] स्वचक्रतः।।२०।।

शङ्खं च वरुणः शक्तिं ददौ तस्यै हुताशनः।
मारुतो दत्तवांश्चापं बाणपूर्णौ तथेषुधी।।२१।।

वज्रमिन्द्रः समुत्पाद्य[2] कुलिशादमराधिपः।
ददौ तस्यै सहस्राक्षो घण्टामैरावताद् गजात्।।२२।।

---

१. कई प्रतियों में इसके बाद 'ततो देवा ददुस्तस्यै स्वानि स्वान्यायुधानि च। ऊचुर्जययेत्युच्चैर्जयन्तीं ते जयैषिणः।।' इतना पाठ अधिक है।
२. पा० – ट्य। २. पा० – ट्य।

कालदण्डाद्यमो दण्डं पाशं चाम्बुपतिर्ददौ।
प्रजापतिश्चाक्षमालां ददौ ब्रह्मा कमण्डलुम्।।२३।।

समस्तरोमकूपेषु निजरश्मीन् दिवाकरः।
कालश्च दत्तवान् खड्गं तस्याश्चर्म च निर्मलम्।।२४।।

क्षीरोदश्चामलं हारमजरे च तथाम्बरे।
चूडामणिं तथा दिव्यं कुण्डले कटकानि च।।२५।।

अर्धचन्द्रं तथा शुभ्रं केयूरान् सर्वबाहुषु।
नूपुरौ विमलौ तद्वद् ग्रैवेयकमनुत्तमम्।।२६।।

अङ्गुलीयकरत्नानि समस्तास्वङ्गुलीषु च।
विश्वकर्मा ददौ तस्यै परशुं चातिनिर्मलम्।।२७।।

अस्त्राण्यनेकरूपाणि तथाभेद्यं च दंशनम्।
अम्लानपङ्कजां मालां शिरस्युरसि चापराम्।।२८।।

अददज्जलधिस्तस्यै पङ्कजं चातिशोभनम्।
हिमवान् वाहनं सिंहं रत्नानि विविधानि च।।२९।।

ददावशून्यं सुरया पानपात्रं धनाधिपः।
शेषश्च सर्वनागेशो महामणिविभूषितम्।।३०।।

नागहारं ददौ तस्यै धत्ते यः पृथिवीमिमाम्।
अन्यैरपि सुरैर्देवी भूषणैरायुधैस्तथा।।३१।।

सम्मानिता ननादोच्चैः साट्टहासं मुहुर्मुहुः।
तस्या नादेन घोरेण कृत्स्नमापूरितं नभः।।३२।।

अमायतातिमहता प्रतिशब्दो महानभूत्।
चुक्षुभुः सकला लोकाः समुद्राश्च चकम्पिरे।।३३।

चचाल वसुधा चेलुः सकलाश्च महीधराः।
जयेति देवाश्च मुदा तामूचुः सिंहवाहिनीम्[१]।।३४।।

तुष्टुवुर्मुनयश्चैनां भक्तिनम्रात्ममूर्तयः।
दृष्ट्वा समस्तं संक्षुब्धं त्रैलोक्यममरारयः।।३५।।

सन्नद्धाखिलसैन्यास्ते समुत्तस्थुरुदायुधाः।
आः किमेतदिति क्रोधादाभाष्य महिषासुरः।।३६।।

अभ्यधावत तं शब्दमशेषैरसुरैर्वृतः।
स ददर्श ततो देवीं व्याप्तलोकत्रयां त्विषा।।३७।।

पादाक्रान्त्या नतभुवं किरीटोल्लिखिताम्बराम्।
क्षोभिताशेषपातालां धनुर्ज्यानिःस्वनेन ताम्।।३८।।

दिशो भुजसहस्रेण समन्ताद् व्याप्य संस्थिताम्।
ततः प्रववृते युद्धं तया देव्या सुरद्विषाम्।।३९।।

शस्त्रास्त्रैर्बहुधा मुक्तैरादीपितदिगन्तरम्।
महिषासुरसेनानीश्चिक्षुराख्यो महासुरः।।४०।।

युयुधे चामरश्चान्यैश्चतुरङ्गबलान्वितः।
रथानामयुतैः षड्भिरुदग्राख्यो महासुरः।।४१।।

---

१. पा० — वाहनाम्।

अयुध्यतायुतानां च सहस्रेण महाहनुः।
पञ्चाशद्भिश्च नियुतैरसिलोमा महासुरः।।४२।।

अयुतानां शतैः षड्भिर्बाष्कलो युयुधे रणे।
गजवाजिसहस्रौघैरनेकैः[१] परिवारितः[२]।।४३।।

वृतो रथानां कोट्या च युद्धे तस्मिन्नयुध्यत।
बिडालाख्योऽयुतानां च पञ्चाशद्भिरथायुतैः।।४४।।

युयुधे संयुगे तत्र रथानां परिवारितः[३]।
अन्ये च तत्रायुतशो रथनागहयैर्वृताः।।४५।।

युयुधुः संयुगे देव्या सह तत्र महासुराः।
कोटिकोटिसहस्रैस्तु रथानां दन्तिनां तथा।।४६।।

हयानां च वृतो युद्धे तत्राभून्महिषासुरः।
तोमरैर्भिन्दिपालैश्च शक्तिभिर्मुसलैस्तथा।।४७।।

युयुधुः संयुगे देव्या खड्गैः परशुपट्टिशैः।
केचिच्च चिक्षिपुः शक्तीः केचित्पाशांस्तथापरे।।४८।।

देवीं खड्गप्रहारैस्तु ते तां हन्तुं प्रचक्रमुः।
सापि देवी ततस्तानि शस्त्राण्यस्त्राणि चण्डिका।।४९।।

---

१. पा० — कैरुग्रदर्शनः। २. परिवारित नामक राक्षस, परितो वारयति शत्रूनिति व्युत्पत्तिः

३. किसी-किसी प्रति में इसके बाद 'कृतः कालो रथानां च रणे पञ्चाशतायुतैः। युयुधे संयुगे तत्र तावद्भिः परिवारितः।।' इतना पाठ अधिक है।

लीलयैव प्रचिच्छेद निजशस्त्रास्त्रवर्षिणी।
अनायस्तानना देवी स्तूयमाना सुरर्षिभिः।।५०।।

मुमोचासुरदेहेषु शस्त्राण्यस्त्राणि चेश्वरी।
सोऽपि क्रुद्धो धुतसटो देव्या वाहनकेसरी।।५१।।

चचारासुरसैन्येषु वनेष्विव हुताशनः।
निःश्वासान् मुमुचे यांश्च युध्यमाना रणेऽम्बिका।।५२।।

त एव सद्यः सम्भूता गणाः शतसहस्रशः।
युयुधुस्ते परशुभिर्भिन्दिपालासिपट्टिशैः।।५३।।

नाशयन्तोऽसुरगणान् देवीशक्त्युपबृंहिताः।
अवादयन्त पटहान् गणाः शङ्खांस्तथापरे।।५४।।

मृदङ्गांश्च तथैवान्ये तस्मिन् युद्धमहोत्सवे।
ततो देवी त्रिशूलेन गदया [1]शक्तिवृष्टिभिः।।५५।।

खड्गादिभिश्च शतशो निजघान महासुरान्।
पातयामास चैवान्यान् घण्टास्वनविमोहितान्।।५६।।

असुरान् भुवि पाशेन बद्ध्वा चान्यानकर्षयत्।
केचिद् द्विधा कृतास्तीक्ष्णैः खड्गपातैस्तथापरे।।५७।।

विपोथिता निपातेन गदया भुवि शेरते।
वेमुश्च केचिद्रुधिरं मुसलेन भृशं हताः।।५८।।

---

१. पा० – शरवृष्टिभिः।

केचिन्निपतिता भूमौ भिन्नाः शूलेन वक्षसि।
निरन्तराः शरौघेण कृताः केचिद्रणाजिरे।।५९।।

श्येना[1]नुकारिणः प्राणान् मुमुचुस्त्रिदशार्दनाः।
केषांचिद् बाहवश्छिन्नाश्छिन्नग्रीवास्तथापरे।।६०।।

शिरांसि पेतुरन्येषामन्ये मध्ये विदारिताः।
विच्छिन्नजङ्घास्त्वपरे पेतुरुर्व्यां महासुराः।।६१।।

एकबाह्वक्षिचरणाः केचिद्देव्या द्विधा कृताः।
छिन्नेऽपि चान्ये शिरसि पतिताः पुनरुत्थिताः।।६२।।

कबन्धा युयुधुर्देव्या गृहीतपरमायुधाः।
ननृतुश्चापरे तत्र युद्धे तूर्यलयाश्रिताः।।६३।।

कबन्धाश्छिन्नशिरसः खड्गशक्त्यृष्टिपाणयः।
तिष्ठ तिष्ठेति भाषन्तो देवीमन्ये महासुराः[2]।।६४।।

पातितै रथनागाश्वैरसुरैश्च वसुन्धरा।
अगम्या साभवत्तत्र यत्राभूत्स महारणः।।६५।।

शोणितौघा महानद्यः सद्यस्तत्र प्रसुस्रुवुः।
मध्ये चासुरसैन्यस्य वारणासुरवाजिनाम्।।६६।।

---

१. पा० — सेनानु०। शल्यानु०। शैलानुः।

२. किसी–किसी प्रति में इसके बाद 'रुधिरौघविलुप्ताङ्गाः संग्रामे लोमहर्षणे।' इतना पाठ अधिक है।

क्षणेन तन्महासैन्यमसुराणां तथाम्बिका।
निन्ये क्षयं यथा वह्निस्तृणदारुमहाचयम्।।६७।।
स च सिंहो महानादमुत्सृजन्धुतकेसरः।
शरीरेभ्योऽमरारीणामसूनिव विचिन्वति।।६८।।
देव्या गणैश्च तैस्तत्र कृतं युद्धं महासुरैः।
यथैषां[1] तुतुषुर्देवाः[2] पुष्पवृष्टिमुचो दिवि।।ॐ।।६९।।

इति श्रीमार्कण्डेयपुराणे सावर्णिके मन्वन्तरे देवीमाहात्म्ये महिषासुरसैन्यवधो नाम द्वितीयोऽध्यायः।।२।।
उवाच१, श्लोकाः ६८, एवम् ६९,
एवमादितः १७३।।

---

१. पा० – यथैनां। २. पा० – तुष्टुवुर्देवाः।

तृतीयोऽध्यायः

सेनापतियोंसहित महिषासुरका वध

ध्यानम्

ॐ उद्यद्भानुसहस्रकान्तिमरुणक्षौमां शिरोमालिकां
रक्तालिप्तपयोधरां जपवटीं विद्यामभीतिं वरम्।
हस्ताब्जैर्दधतीं त्रिनेत्रविलसद्वक्त्रारविन्दश्रियं
देवीं बद्धहिमांशुरत्नमुकुटां वन्देऽरविन्दस्थिताम्।।

'ॐ' ऋषिरुवाच।।१।।

निहन्यमानं तत्सैन्यमवलोक्य महासुरः।
सेनानीश्चिक्षुरः कोपाद्ययौ योद्धुमथाम्बिकाम्।।२।।
स देवीं शरवर्षेण ववर्ष समरेऽसुरः।
यथा मेरुगिरेः शृङ्गं तोयवर्षेण तोयदः।।३।।
तस्यच्छित्त्वा ततो देवी लीलयैव शरोत्करान्।
जघान तुरगान् बाणैर्यन्तारं चैव वाजिनाम्।।४।।
चिच्छेद च धनुः सद्यो ध्वजं चातिसमुच्छ्रितम्।
विव्याध चैव गात्रेषु छिन्नधन्वानमाशुगैः।।५।।
सच्छिन्नधन्वा विरथो हताश्वो हतसारथिः।
अभ्यधावत तां देवीं खड्गचर्मधरोऽसुरः।।६।।

सिंहमाहत्य खड्गेन तीक्ष्णधारेण मूर्धनि।
आजघान भुजे सव्ये देवीमप्यतिवेगवान्।।७।।

तस्याः खड्गो भुजं प्राप्य पफाल नृपनन्दन।
ततो जग्राह शूलं स कोपादरुणलोचनः।।८।।

चिक्षेप च ततस्तत्तु भद्रकाल्यां महासुरः।
जाज्वल्यमानं तेजोभी रविबिम्बमिवाम्बरात्।।९।।

दृष्ट्वा तदापतच्छूलं देवी शूलममुञ्चत।
तच्छूलं[1] शतधा तेन नीतं स च महासुरः।।१०।।

हते तस्मिन्महावीर्ये महिषस्य चमूपतौ।
आजगाम गजारूढश्चामरस्त्रिदशार्दनः।।११।।

सोऽपि शक्तिं मुमोचाथ देव्यास्तामम्बिका द्रुतम्।
हुंकाराभिहतां भूमौ पातयामास निष्प्रभाम्।।१२।।

भग्नां शक्तिं निपतितां दृष्ट्वा क्रोधसमन्वितः।
चिक्षेप चामरः शूलं बाणैस्तदपि साच्छिनत्।।१३।।

ततः सिंहः समुत्पत्य गजकुम्भान्तरे स्थितः।
बाहुयुद्धेन युयुधे तेनोच्चैस्त्रिदशारिणा।।१४।।

युद्ध्यमानौ ततस्तौ तु तस्मान्नागान्महीं गतौ।
युयुधातेऽतिसंरब्धौ प्रहारैरतिदारुणैः।।१५।।

---

१. पा० – तेन तच्छतथा नीतं

ततो वेगात् खमुत्पत्य निपत्य च मृगारिणा।
करप्रहारेण शिरश्चामरस्य पृथक्कृतम्।।१६।।

उदग्रश्च रणे देव्या शिलावृक्षादिभिर्हतः।
दन्तमुष्टितलैश्चैव करालश्च निपातितः।।१७।।

देवी क्रुद्धा गदापातैश्चूर्णयामास चोद्धतम्।
वाष्कलं भिन्दिपालेन बाणैस्ताम्रं तथान्धकम्।।१८।।

उग्रास्यमुग्रवीर्यं च तथैव च महाहनुम्।
त्रिनेत्रा च त्रिशूलेन जघान परमेश्वरी।।१९।।

बिडालस्यासिना कायात्पातयामास वै शिरः।
दुर्धरं दुर्मुखं चोभौ शरैर्निन्ये यमक्षयम्[१]।।२०।।

एवं संक्षीयमाणे तु स्वसैन्ये महिषासुरः।
माहिषेण स्वरूपेण त्रासयामास तान् गणान्।।२१।।

कांश्चित्तुण्डप्रहारेण खुरक्षेपैस्तथापरान्।
लाङ्गूलताडितांश्चान्याञ्छृङ्गाभ्यां च विदारितान्।।२२।।

वेगेन कांश्चिदपरान्नादेन भ्रमणेन च।
निःश्वासपवनेनान्यान् पातयामास भूतले।।२३।।

---

१. इसके बाद किसी-किसी प्रति में -

'कालं च कालदण्डेन कालरात्रिरपातयत्।
उग्रदर्शनमत्युग्रैः खड्गपातैरताडयत्।।

असिनैवासिलोमानमच्छिदत्सा रणोत्सवे।
गणैः सिंहेन देव्या च जयक्ष्वेडाकृतोत्सवैः।।'

— ये दो श्लोक अधिक हैं।

निपात्य प्रमथानीकमभ्यधावत सोऽसुरः।
सिंहं हन्तुं महादेव्याः कोपं चक्रे ततोऽम्बिका।।२४।।

सोऽपि कोपान्महावीर्यः खुरक्षुण्णमहीतलः।
शृङ्गाभ्यां पर्वतानुच्चांश्चिक्षेप च ननाद च।।२५।।

वेगभ्रमणविक्षुण्णा मही तस्य व्यशीर्यत।
लाङ्गूलेनाहतश्चाब्धिः प्लावयामास सर्वतः।।२६।।

धुतशृङ्गविभिन्नाश्च खण्डं[1] खण्डं ययुर्घनाः।
श्वासानिलास्ताः शतशो निपेतुर्नभसोऽचलाः।।२७।।

इति क्रोधसमाध्मातमापतन्तं महासुरम्।
दृष्ट्वा सा चण्डिका कोपं तद्वधाय तदाकरोत्।।२८।।

सा क्षिप्त्वा तस्य वै पाशं तं बबन्ध महासुरम्।
तत्याज माहिषं रूपं सोऽपि बद्धो महामृधे।।२९।।

ततः सिंहोऽभवत्सद्यो यावत्तस्याम्बिका शिरः।
छिनत्ति तावत्पुरुषः खड्गपाणिरदृश्यत।।३०।।

तत एवाशु पुरुषं देवी चिच्छेद सायकैः।
तं खड्गचर्मणा सार्धं ततः सोऽभून्महागजः।।३१।।

करेण च महासिंहं तं चकर्ष जगर्ज च।
कर्षतस्तु करं देवी खड्गेन निरकृन्तत।।३२।।

---

१. पा० – खण्डखण्डं।

ततो महासुरो भूयो माहिषं वपुरास्थितः।
तथैव क्षोभयामास त्रैलोक्यं सचराचरम्।।३३।।

ततः क्रुद्धा जगन्माता चण्डिका पानमुत्तमम्।
पपौ पुनः पुनश्चैव जहासारुणलोचना।।३४।।

ननर्द चासुरः सोऽपि बलवीर्यमदोद्धतः।
विषाणाभ्यां च चिक्षेप चण्डिकां प्रति भूधरान्।।३५।।

सा च तान् प्रहितांस्तेन चूर्णयन्ती शरोत्करैः।
उवाच तं मदोद्धूतमुखरागाकुलाक्षरम्।।३६।।

देव्युवाच।।३७।।

गर्ज गर्ज क्षणं मूढ मधु यावत्पिबाम्यहम्।
मया त्वयि हतेऽत्रैव गर्जिष्यन्त्याशु देवताः।।३८।।

ऋषिरुवाच।।३९।।

एवमुक्त्वा समुत्पत्य साऽऽरूढा तं महासुरम्।
पादेनाक्रम्य कण्ठे च शूलेनैनमताडयत्।।४०।।

ततः सोऽपि पदाऽऽक्रान्तस्तया निजमुखात्ततः।
अर्धनिष्क्रान्त एवासीद्[1] देव्या वीर्येण संवृतः।।४१।।

अर्धनिष्क्रान्त एवासौ युध्यमानो महासुरः।
तया महासिना देव्या शिरश्छित्त्वा निपातितः[2]।।४२।।

---

१. पा० — एवाति देव्या। २. किसी-किसी प्रति में इसके बाद — 'एवं स महिषो नाम ससैन्यः ससुहृद्गणः। त्रैलोक्यं मोहयित्वा तु तया देव्या विनाशिताः।। त्रैलोक्यस्थैस्तदा भूतैर्महिषे विनिपातिते। जयेत्युक्तं ततः सर्वैः सदेवासुरमानवैः।।' इतना अधिक पाठ है।

ततो हाहाकृतं सर्वं दैत्यसैन्यं ननाश तत्।
प्रहर्षं च परं जग्मुः सकला देवतागणाः।।४३।।

तुष्टुवुस्तां सुरा देवीं सह दिव्यैर्महर्षिभिः।
जगुर्गन्धर्वपतयो ननृतुश्चाप्सरोगणाः।।ॐ।।४४।।

इति श्रीमार्कण्डेयपुराणे सावर्णिके मन्वन्तरे देवीमाहात्म्ये महिषासुरवधो नाम तृतीयोऽध्यायः।।३।।

उवाच ३, श्लोकाः ४१, एवम् ४४, एवमादितः २१७।।

चतुर्थोऽध्यायः

इन्द्रादि देवताओं द्वारा देवी की स्तुति

ध्यानम्

ॐ कालाभ्राभां कटाक्षैररिकुलभयदां मौलिबद्धेन्दुरेखां
शङ्खं चक्रं कृपाणं त्रिशिखमपि करैरुद्वहन्तीं त्रिनेत्राम्।
सिंहस्कन्धाधिरूढां त्रिभुवनमखिलं तेजसा पूरयन्तीं
ध्यायेद् दुर्गां जयाख्यां त्रिदशपरिवृतां सेवितां सिद्धिकामैः।।

'ॐ' ऋषिरुवाच[1] ।।१।।

शक्रादयः सुरगणा निहतेऽतिवीर्ये
तस्मिन्दुरात्मनि सुरारिबले च देव्या।
तां तुष्टुवुः प्रणतिनम्रशिरोधरांसा
वाग्भिः प्रहर्षपुलकोद्गमचारुदेहाः।।२।।

देव्या यया ततमिदं जगदात्मशक्त्या
निश्शेषदेवगणशक्तिसमूहमूर्त्या ।
तामम्बिकामखिलदेवमहर्षिपूज्यां
भक्त्या नताः स्म विदधातु शुभानि सा नः।।३।।

---

१. किसी–किसी प्रति में 'ऋषिरुवाच' के बाद 'ततः सुरगणाः सर्वे देव्या इन्द्रपुरोगमाः। स्तुतिमारेभिरे कर्तुं निहते महिषासुरे।।' इतना पाठ अधिक है।

यस्याः प्रभावमतुलं भगवाननन्तो
ब्रह्मा हरश्च न हि वक्तुमलं बलं च।
सा चण्डिकाखिलजगत्परिपालनाय
नाशाय चाशुभभयस्य मतिं करोतु।।४।।

या श्रीः स्वयं सुकृतिनां भवनेष्वलक्ष्मीः
पापात्मनां कृतधियां हृदयेषु बुद्धिः।
श्रद्धा सतां कुलजनप्रभवस्य लज्जा
तां त्वां नताः स्म परिपालय देवि विश्वम्।।५।।

किं वर्णयाम तव रूपमचिन्त्यमेतत्
किं चातिवीर्यमसुरक्षयकारि भूरि।
किं चाहवेषु परितानि तवाद्भुतानि
सर्वेषु देव्यसुरदेवगणादिकेषु।।६।।

हेतुः समस्तजगतां त्रिगुणापि दोषै-
र्न ज्ञायसे हरिहरादिभिरप्यपारा।
सर्वाश्रयाखिलमिदं जगदंशभूत-
मव्याकृता हि परमा प्रकृतिस्त्वमाद्या।।७।।

यस्याः समस्तसुरता समुदीरणेन
तृप्तिं प्रयाति सकलेषु मखेषु देवि।
स्वाहासि वै पितृगणस्य च तृप्तिहेतु-
रुच्चार्यसे त्वमत एव जनैः स्वधा च।।८।।

या मुक्तिहेतुरविचिन्त्यमहाव्रता त्व-[१]
मभ्यस्यसे सुनियतेन्द्रियतत्त्वसारैः।
मोक्षार्थिभिर्मुनिभिरस्तसमस्तदोषै-
र्विद्यासि सा भगवती परमा हि देवि।।९।।

शब्दात्मिका सुविमलर्ग्यजुषां निधान-
मुद्गीथरम्यपदपाठवतां च साम्नाम्।
देवी त्रयी भगवती भवभावनाय
वार्ता च सर्वजगतां परमार्तिहन्त्री।।१०।।

मेधासि देवि विदिताखिलशास्त्रसारा
दुर्गासि दुर्गभवसागरनौरसङ्गा।
श्रीः कैटभारिहृदयैककृताधिवासा
गौरी त्वमेव शशिमौलिकृतप्रतिष्ठा।।११।।

ईषत्सहासममलं परिपूर्णचन्द्र-
बिम्बानुकारि कनकोत्तमकान्तिकान्तम्।
अत्यद्भुतं प्रहृतमात्तरुषा तथापि
वक्त्रं विलोक्य सहसा महिषासुरेण।।१२।।

दृष्ट्वा तु देवि कुपितं भ्रुकुटीकराल-
मुद्यच्छशाङ्कसदृशच्छवि यन्न सद्यः।
प्राणान्मुमोच महिषस्तदतीव चित्रं
कैर्जीव्यते हि कुपितान्तकदर्शनेन।।१३।।

---

१. पा० – च अभ्य०।

देवि प्रसीद परमा भवती भवाय
सद्यो विनाशयसि कोपवती कुलानि।
विज्ञातमेतदधुनैव यदस्तमेत-
न्नीतं बलं सुविपुलं महिषासुरस्य।।१४।।

ते सम्मता जनपदेषु धनानि तेषां
तेषां यशांसि न च सीदति धर्मवर्गः।
धन्यास्त एव निभृतात्मजभृत्यदारा
येषां सदाभ्युदयदा भवती प्रसन्ना।।१५।।

धर्म्याणि देवि सकलानि सदैव कर्मा-
ण्यत्यादृतः प्रतिदिनं सुकृती करोति।
स्वर्गं प्रयाति च ततो भवतीप्रसादा-
ल्लोकत्रयेऽपि फलदा ननु देवि तेन।।१६।।

दुर्गे स्मृता हरसि भीतिमशेषजन्तोः
स्वस्थैः स्मृता मतिमतीव शुभां ददासि।
दारिद्र्यदुःखभयहारिणि का त्वदन्या
सर्वोपकारकरणाय सदाऽऽर्द्रचित्ता।।१७।।

एभिर्हतैर्जगदुपैति सुखं तथैते
कुर्वन्तु नाम नरकाय चिराय पापम्।
संग्राममृत्युमधिगम्य दिवं प्रयान्तु
मत्वेति नूनमहितान् विनिहंसि देवि।।१८।।

दृष्ट्वैव किं न भवती प्रकरोति भस्म
सर्वासुरानरिषु यत्प्रहिणोषि शस्त्रम्।
लोकान् प्रयान्तु रिपवोऽपि हि शस्त्रपूता
इत्थं मतिर्भवति तेष्वपि तेऽतिसाध्वी।।१९।।

खड्गप्रभानिकरविस्फुरणैस्तथोग्रैः
शूलाग्रकान्तिनिवहेन दृशोऽसुराणाम्।
यन्नागता विलयमंशुमदिन्दुखण्ड-
योग्याननं तव विलोकयतां तदेतत्।।२०।।

दुर्वृत्तवृत्तशमनं तव देवि शीलं
रूपं तथैतदविचिन्त्यमतुल्यमन्यैः।
वीर्यं च हन्तृ हृतदेवपराक्रमाणां
वैरिष्वपि प्रकटितैव दया त्वयेत्थम्।।२१।।

केनोपमा भवतु तेऽस्य पराक्रमस्य
रूपं च शत्रुभयकार्यतिहारि कुत्र।
चित्ते कृपा समरनिष्ठुरता च दृष्टा
त्वय्येव देवि वरदे भुवनत्रयेऽपि।।२२।।

त्रैलोक्यमेतदखिलं रिपुनाशनेन
त्रातं त्वया समरमूर्धनि तेऽपि हत्वा।
नीता दिवं रिपुगणा भयमप्यपास्त-
मस्माकमुन्मदसुरारिभवं नमस्ते।।२३।।

शूलेन पाहि नो देवि पाहि खड्गेन चाम्बिके।
घण्टास्वनेन नः पाहि चापज्यानिःस्वनेन च।।२४।।

प्राच्यां रक्ष प्रतीच्यां च चण्डिके रक्ष दक्षिणे।
भ्रामणेनात्मशूलस्य उत्तरस्यां तथेश्वरि।।२५।।

सौम्यानि यानि रूपाणि त्रैलोक्ये विचरन्ति ते।
यानि चात्यर्थघोराणि तै रक्षास्मांस्तथा भुवम्।।२६।।

खड्गशूलगदादीनि यानि चास्त्राणि तेऽम्बिके।
करपल्लवसङ्गीनि तैरस्मान् रक्ष सर्वतः।।२७।।

ऋषिरुवाच।।२८।।

एवं स्तुता सुरैर्दिव्यैः कुसुमैर्नन्दनोद्भवैः।
अर्चिता जगतां धात्री तथा गन्धानुलेपनैः।।२९।।

भक्त्या समस्तैस्त्रिदशैर्दिव्यैर्धूपैस्तु[१] धूपिता।
प्राह प्रसादसुमुखी समस्तान् प्रणतान् सुरान्।।३०

देव्युवाच।।३१।।

व्रियतां त्रिदशाः सर्वे यदस्मत्तोऽभिवाञ्छितम्[२]।।३२।।

---

१. पा० – पैः सुधूपिता।

२. मार्कण्डेयपुराण की आधुनिक प्रतियों में – 'ददाम्यहमतिप्रीत्या स्तवैरेभिः सुपूजिता।' इतना पाठ अधिक है। किसी-किसी प्रति में – 'कर्तव्यमपरं यच्च दुष्करं तन्न विद्महे। इत्याकर्ण्य वचो देव्याः प्रत्यूचुस्ते दिवौकसः।।' इतना और अधिक पाठ है।

देवा ऊचुः॥३३॥

भगवत्या कृतं सर्वं न किंचिदवशिष्यते॥३४॥

यदयं निहतः शत्रुरस्माकं महिषासुरः।
यदि चापि वरो देयस्त्वयास्माकं महेश्वरि॥३५॥

संस्मृता संस्मृता त्वं नो हिंसेथाः परमापदः।
यश्च मर्त्यः स्तवैरेभिस्त्वां स्तोष्यत्यमलानने॥३६॥

तस्य वित्तर्द्धिविभवैर्धनदारादिसम्पदाम्।
वृद्धयेऽस्मत्प्रसन्ना त्वं भवेथाः सर्वदाम्बिके॥३७॥

ऋषिरुवाच॥३८॥

इति प्रसादिता देवैर्जगतोऽर्थे तथाऽऽत्मनः।
तथेत्युक्त्वा भद्रकाली बभूवान्तर्हिता नृप॥३९॥

इत्येतत्कथितं भूप सम्भूता सा यथा पुरा।
देवी देवशरीरेभ्यो जगत्त्रयहितैषिणी॥४०॥

पुनश्च गौरीदेहात्सा[१] समुद्भूता यथाभवत्।
वधाय दुष्टदैत्यानां तथा शुम्भनिशुम्भयोः॥४१॥

---

१. किसी-किसी प्रति में 'गौरीदेहा सा' 'गौरी देहा सा' इत्यादि पाठ भी उपलब्ध है।

रक्षणाय च लोकानां देवानामुपकारिणी।
तच्छृणुष्व मयाऽऽख्यातं यथावत्कथयामि ते।।ह्रीं ॐ।।४२।।

इति श्रीमार्कण्डेयपुराणे सावर्णिके मन्वन्तरे देवीमाहात्म्ये शक्रादिस्तुतिर्नाम चतुर्थोऽध्यायः।।४।।
उवाच ५, अर्धश्लोकौ २, श्लोकाः ३५, एवम् ४२, एवमादितः २५९।।

पञ्चमोऽध्यायः

देवताओं द्वारा देवी की स्तुति, चण्ड-मुण्ड के मुख से अम्बिका के रूप की प्रशंसा सुनकर शुम्भ का उनके पास दूत भेजना और दूत का निराश लौटना

विनियोगः

ॐ अस्य श्रीउत्तरचरित्रस्य रुद्र ऋषिः, महासरस्वती देवता, अनुष्टुप् छन्दः, भीमा शक्तिः, भ्रामरी बीजम्, सूर्यस्तत्त्वम्, सामवेदः स्वरूपम्, महासरस्वतीप्रीत्यर्थे उत्तरचरित्रपाठे विनियोगः।

ध्यानम्

ॐ घण्टाशूलहलानि शङ्खमुसले चक्रं धनुः सायकं
हस्ताब्जैर्दधतीं घनान्तविलसच्छीतांशुतुल्यप्रभाम्।
गौरीदेहसमुद्भवां त्रिजगतामाधारभूतां महा-
पूर्वामत्र सरस्वतीमनुभजे शुम्भादिदैत्यार्दिनीम्।।

'ॐक्लीं' ऋषिरुवाच।।१।।

पुरा शुम्भनिशुम्भाभ्यामसुराभ्यां शचीपतेः।
त्रैलोक्यं यज्ञभागाश्च हृता मदबलाश्रयात्।।२।।

तावेव सूर्यतां तद्वदधिकारं तथैन्दवम्।
कौबेरमथ याम्यं च चक्राते वरुणस्य च।।३।।

तावेव पवनर्द्धिं च चक्रतुर्वह्निकर्म च[१]।
ततो देवा विनिर्धूता भ्रष्टराज्याः पराजिताः।।४।।

हृताधिकारास्त्रिदशास्ताभ्यां सर्वे निराकृताः।
महासुराभ्यां तां देवीं संस्मरन्त्यपराजिताम्।।५।।

तयास्माकं वरो दत्तो यथाऽऽपत्सु स्मृताखिलाः।
भवतां नाशयिष्यामि तत्क्षणात्परमापदः।।६।।

इति कृत्वा मतिं देवा हिमवन्तं नगेश्वरम्।
जग्मुस्तत्र ततो देवीं विष्णुमायां प्रतुष्टुवुः।।७।।

देवा ऊचुः।।८।।

नमो देव्यै महादेव्यै शिवायै सततं नमः।
नमः प्रकृत्यै भद्रायै नियताः प्रणताः स्म ताम्।।९।।

रौद्रायै नमो नित्यायै गौर्यै धात्र्यै नमो नमः।
ज्योत्स्नायै चेन्दुरूपिण्यै सुखायै सततं नमः।।१०।।

कल्याण्यै प्रणतां[२] वृद्ध्यै सिद्ध्यै कुर्मो नमो नमः।
नैर्ऋत्यै भूभृतां लक्ष्म्यै शर्वाण्यै ते नमो नमः।।११।।

---

१. किसी–किसी प्रति में इसके बाद 'अन्येषां चाधिकारान् स स्वयमेवाधितिष्ठति' इतना पाठ अधिक है।

२. वृद्ध्यै सिद्ध्यै च प्रणतां देवीं प्रति नमः नतिं कुर्म इत्यन्वयः। यद् वा प्रणमन्तीति प्रणन्तः, तेषां प्रणतामिति षष्ठीबहुवचनान्तं बोध्यम्। इति शान्तनव्यां टीकायां स्पष्टम्, 'प्रणताः' इति पाठान्तरम्।

दुर्गायै दुर्गपारायै सारायै सर्वकारिण्यै।
ख्यात्यै तथैव कृष्णायै धूम्रायै सततं नमः।।१२।।

अतिसौम्यातिरौद्रायै नतास्तस्यै नमो नमः।
नमो जगत्प्रतिष्ठायै देव्यै कृत्यै नमो नमः।।१३।।

या देवी सर्वभूतेषु विष्णुमायेति शब्दिता।
नमस्तस्यै।।१४।। नमस्तस्यै।।१५।। नमस्तस्यै नमो नमः।।१६।।

या देवी सर्वभूतेषु चेतनेत्यभिधीयते।
नमस्तस्यै।।१७।। नमस्तस्यै।।१८।। नमस्तस्यै नमो नमः।।१९।।

या देवी सर्वभूतेषु बुद्धिरूपेण संस्थिता।
नमस्तस्यै।।२०।। नमस्तस्यै।।२१।। नतस्तस्यै नमो नमः।।२२।।

या देवी सर्वभूतेषु निद्रारूपेण संस्थिता।
नमस्तस्यै।।२३। नमस्तस्यै।।२४।। नमस्तस्यै नमो नमः।।२५।।

या देवी सर्वभूतेषु क्षुधारूपेण संस्थिता।
नमस्तस्यै।।२६।। नमस्तस्यै।।२७।। नमस्तस्यै नमो नमः।।२८।।

या देवी सर्वभूतेषुच्छायारूपेण संस्थितः।
नमस्तस्यै।।२९।। नमस्तस्यै।।३०।। नमस्तस्यै नमो नमः।।३१।।

या देवी सर्वभूतेषु शक्तिरूपेण संस्थिता।
नमस्तस्यै।।३२।। नमस्तस्यै।।३३।। नमस्तस्यैनमो नमः।।३४।।

या देवी सर्वभूतेषु तृष्णारूपेण संस्थिता।
नमस्तस्यै।।३५।। नमस्तस्यै।।३६।। नमस्तस्यै नमो नमः।।३७।।

या देवी सर्वभूतेषु क्षान्तिरूपेण संस्थिता।
नमस्तस्यै।।३८।। नमस्तस्यै।।३९।। नमस्तस्यै नमो नमः।।४०।।

या देवी सर्वभूतेषु जातिरूपेण संस्थिता।
नमस्तस्यै।।४१।। नमस्तस्यै।।४२।। नमस्तस्यै नमो नमः।।४३।।

या देवी सर्वभूतेषु लज्जारूपेण संस्थिता।
नमस्तस्यै।।४४।। नमस्तस्यै।।४५।। नमस्तस्यै नमो नमः।।४६।।

या देवी सर्वभूतेषु शान्तिरूपेण संस्थिता।
नमस्तस्यै।।४७।। नमस्तस्यै।।४८।। नमस्तस्यै नमो नमः।।४९।।

या देवी सर्वभूतेषु श्रद्धारूपेण संस्थिता।
नमस्तस्यै।।५०।। नमस्तस्यै।।५१।। नमस्तस्यै नमो नमः।।५२।।

या देवी सर्वभूतेषु कान्तिरूपेण संस्थिता।
नमस्तस्यै।।५३।। नमस्तस्यै।।५४।। नमस्तस्यै नमो नमः।।५५।।

या देवी सर्वभूतेषु लक्ष्मीरूपेण संस्थिता।
नमस्तस्यै।।५६।। नमस्तस्यै।।५७।। नमस्तस्यै नमो नमः।।५८।।

या देवी सर्वभूतेषु वृत्तिरूपेण संस्थिता।
नमस्तस्यै।।५९।। नमस्तस्यै।।६०।। नमस्तस्यै नमो नमः।।६१।।

या देवी सर्वभूतेषु स्मृतिरूपेण संस्थिता।
नमस्तस्यै।।६२।।नमस्तस्यै।।६३।। नमस्तस्यै नमो नमः।।६४।।

या देवी सर्वभूतेषु दयारूपेण संस्थिता।
नमस्तस्यै।।६५।। नमस्तस्यै।।६६।। नमस्तस्यै नमो नमः।।६७।।

या देवी सर्वभूतेषु तुष्टिरूपेण संस्थिता।
नमस्तस्यै।।६८।। नमस्तस्यै।।६९।। नमस्तस्यै नमो नमः।।७०।।

या देवी सर्वभूतेषु मातृरूपेण संस्थिता।
नमस्तस्यै।।७१। नमस्तस्यै।।७२।। नमस्तस्यै नमो नमः।।७३।।

या देवी सर्वभूतेषु भ्रान्तिरूपेण संस्थिता।
नमस्तस्यै।।७४।। नमस्तस्यै।।७५।। नमस्तस्यै नमो नमः।।७६।।

इन्द्रियाणामधिष्ठात्री भूतानां चाखिलेषु या।
भूतेषु सततं तस्यै व्याप्तिदेव्यै नमो नमः।।७७।।

चितिरूपेण या कृत्स्नमेतद् व्याप्य स्थिता जगत्।
नमस्तस्यै।।७८ नमस्तस्यै।।७९।। नमस्तस्यै नमो नमः।।८०।।

स्तुता सुरैः पूर्वमभीष्टसंश्रया-
त्तथा सुरेन्द्रेण दिनेषु सेविता।
करोतु सा नः शुभहेतुरीश्वरी
शुभानि भद्राण्यभिहन्तु चापदः।।८१।।

या साम्प्रतं चोद्धतदैत्यतापितै-
रस्माभिरीशा च सुरैर्नमस्यते।
या च स्मृता तत्क्षणमेव हन्ति नः
सर्वापदो भक्तिविनम्रमूर्तिभिः।।८२।।

ऋषिरुवाच।।८३।।

एवं स्तवादियुक्तानां देवानां तत्र पार्वती।
स्नातुमभ्याययौ तोये जाह्नव्या नृपनन्दन।।८४।।

साब्रवीत्तान् सुरान् सुभ्रूर्भवद्भिः स्तूयतेऽत्र का।
शरीरकोशतश्चास्याः समुद्भूताब्रवीच्छिवा।।८५।।

स्तोत्रं ममैतत् क्रियते शुम्भदैत्यनिराकृतैः।
देवैः समेतैः[१] समरे निशुम्भेन पराजितैः।।८६।।

शरीरकोशा[२]द्यत्तस्याः पार्वत्या निःसृताम्बिका।
कौशि[३]कीति समस्तेषु ततो लोकेषु गीयते।।८७।।

तस्यां विनिर्गतायां तु कृष्णाभूत्सापि पार्वती।
कालिकेति समाख्याता हिमाचलकृतश्रया।।८८।।

ततोऽम्बिकां परं रूपं बिभ्राणां सुमनोहरम्।
ददर्श चण्डो मुण्डश्च भृत्यौ शुम्भनिशुम्भयोः।।८९।।

ताभ्यां शुम्भाय चाख्याता अतीव सुमनोहरा।
काप्यास्ते स्त्री महाराज भासयन्ती हिमाचलम्।।९०।।

नैव तादृक् क्वचिद्रूपं दृष्टं केनचिदुत्तमम्।
ज्ञायतां काप्यसौ देवी गृह्यतां चासुरेश्वर।।९१।।

स्त्रीरत्नमतिचार्वङ्गी द्योतयन्ती दिशस्त्विषा।
सा तु तिष्ठति दैत्येन्द्र तां भवान् द्रष्टुमर्हति।।९२।।

यानि रत्नानि मणयो गजाश्वादीनि वै प्रभो।
त्रैलोक्ये तु समस्तानि साम्प्रतं भान्ति ते गृहे।।९३।।

---

१. पा० – समस्तैः। २. पा० – कोषा। ३. पा० – कौषिकी।

ऐरावतः समानीतो गजरत्नं पुरन्दरात्।
पारिजाततरुश्चायं तथैवोच्चैः श्रवा हयः।।९४।।

विमानं हंससंयुक्तमेतत्तिष्ठति तेऽङ्गणे।
रत्नभूतमिहानीतं यदासीद्वेधसोऽद्भुतम्।।९५।।

निधिरेष महापद्मः समानीतो धनेश्वरात्।
किञ्जल्किनीं ददौ चाब्धिर्मालामम्लानपङ्कजाम्।।९६।।

छत्रं ते वारुणं गेहे काञ्चनस्रावि तिष्ठति।
तथायं स्यन्दनवरो यः पुराऽऽसीत्प्रजापतेः।।९७।।

मृत्युरुत्क्रान्तिदा नाम शक्तिरीश त्वया हृता।
पाशः सलिलराजस्य भ्रातुस्तव परिग्रहे।।९८।।

निशुम्भस्याब्धिजाताश्च समस्ता रत्नजातयः।
वह्निरपि[1] ददौ तुभ्यमग्निशौचे च वाससी।।९९।।

एवं दैत्येन्द्र रत्नानि समस्तान्याहृतानि ते।
स्त्रीरत्नमेषा कल्याणी त्वया कस्मान्न गृह्यते।।१००।।

ऋषिरुवाच।।१०१।।

निशम्येति वचः शुम्भः स तदा चण्डमुण्डयोः।
प्रेषयामास सुग्रीवं दूतं देव्या महासुरम्[2]।।१०२।।

---

१. पा० — श्चापि। २. पा० — इसके बाद कहीं-कहीं 'शुम्भ उवाच' इतना अधिक पाठ है।

इति चेति च वक्तव्या सा गत्वा वचनान्मम।
यथा चाभ्येति सम्प्रीत्या तथा कार्यं त्वया लघु।।१०३।।
स तत्र गत्वा यत्रास्ते शैलोद्देशेऽतिशोभने।
सा[१] देवी तां ततः प्राह श्लक्ष्णं मधुरया गिरा।।१०४।।

दूत उवाच।।१०५।।

देवि दैत्येश्वरः शुम्भस्त्रैलोक्ये परमेश्वरः।
दूतोऽहं प्रेषितस्तेन त्वत्सकाशमिहागतः।।१०६।।
अव्याहताज्ञः सर्वासु यः सदा देवयोनिषु।
निर्जिताखिलदैत्यारिः स यदाह शृणुष्व तत्।।१०७।।
मम त्रैलोक्यमखिलं मम देवा वशानुगाः।
यज्ञभागानहं सर्वानुपाश्नामि पृथक् पृथक्।।१०८।।
त्रैलोक्ये वररत्नानि मम वश्यान्यशेषतः।
तथैव गजरत्नं[२] च हृत्वा[३] देवेन्द्रवाहनम्।।१०९।।
क्षीरोदमथनोद्भूतमश्वरत्नं ममामरैः।
उच्चैःश्रवससंज्ञं तत्प्रणिपत्य समर्पितम्।।११०।।
यानि चान्यानि देवेषु गन्धर्वेषूरगेषु च।
रत्नभूतानि भूतानि तानि मय्येव शोभने।।१११।।
स्त्रीरत्नभूतां त्वां देवि लोके मन्यामहे वयम्।
सा त्वमस्मानुपागच्छ यतो रत्नभुजो वयम्।।११२।।

१. पा० — तां च देवीं ततः। २. पा० — गजरत्नानि। ३. पा० — हृतं।

मां वा ममानुजं वापि निशुम्भमुरुविक्रमम्।
भज त्वं चञ्चलापाङ्गि रत्नभूतासि वै यतः।।११३।।

परमैश्वर्यमतुलं प्राप्स्यसे मत्परिग्रहात्।
एतद् बुद्ध्या समालोच्य मत्परिग्रहतां व्रज।।११४।।

ऋषिरुवाच।।११५।।

इत्युक्ता सा तदा देवी गम्भीरान्तः स्मिता जगौ।
दुर्गा भगवती भद्रा ययेदं धार्यते जगत्।।११६।।

देव्युवाच।।११७।।

सत्यमुक्तं त्वया नात्र मिथ्या किंचित्त्वयोदितम्।
त्रैलोक्याधिपतिः शुम्भो निशुम्भश्चापि तादृशः।।११८।।

किं त्वत्र यत्प्रतिज्ञातं मिथ्या तत्क्रियते कथम्।
श्रूयतामल्पबुद्धित्वात्प्रतिज्ञा या कृता पुरा।।११९।।

यो मां जयति संग्रामे यो मे दर्पं व्यपोहति।
यो मे प्रतिबलो लोके स मे भर्ता भविष्यति।।१२०।।

तदागच्छतु शुम्भोऽत्र निशुम्भो वा महासुरः।
मां जित्वा किं चिरेणात्र पाणिं गृह्णातु मे लघु।।१२१।।

दूत उवाच।।१२२।।

अवलिप्तासि मैवं त्वं देवि ब्रूहि ममाग्रतः।
त्रैलोक्ये कः पुमांस्तिष्ठेदग्रे शुम्भनिशुम्भयोः।।१२३।।

अन्येषामपि दैत्यानां सर्वे देवा न वै युधि।
तिष्ठन्ति सम्मुखे देवि किं पुनः स्त्री त्वमेकिका।।१२४।।

इन्द्राद्याः सकला देवास्तस्थुर्येषां न संयुगे।
शुम्भादीनां कथं तेषां स्त्री प्रयास्यसि सम्मुखम्।।१२५।।

सा त्वं गच्छ मयैवोक्ता पार्श्वं शुम्भनिशुम्भयोः।
केशाकर्षणनिर्धूतगौरवा मा गमिष्यसि।।१२६।।

देव्युवाच।।१२७।।

एवमेतद् बली शुम्भो निशुम्भश्चातिवीर्यवान्।
किं करोमि प्रतिज्ञा मे यदनालोचिता पुरा।।१२८।।

स त्वं गच्छ मयोक्तं ते यदेतत्सर्वमादृतः।
तदाचक्ष्वासुरेन्द्राय स च युक्तं करोतु तत्[1]।।ॐ।।१२९।।

इति श्रीमार्कण्डेयपुराणे सावर्णिके मन्वन्तरे देवीमाहात्म्ये देव्या दूतसंवादो नाम पञ्चमोऽध्यायः।।५।।

उवाच ९, त्रिपान्मन्त्राः ६६, श्लोकाः ५४, एवम् १२९, एवमादिताः ३८८

---

१. पा० – यत्।

षष्ठोऽध्यायः

धूम्रलोचन-वध

ध्यानम्

ॐ नागाधीश्वरविष्टरां फणिफणोत्तंसोरुरत्नावली-
भास्वद्देहलतां दिवाकरनिभां नेत्रत्रयोद्भासिताम्।
मालाकुम्भकपालनीरजकरां चन्द्रार्धचूडां परां
सर्वज्ञेश्वरभैरवाङ्कनिलयां पद्मावतीं चिन्तये।।

'ॐ' ऋषिरुवाच।।१।।

इत्याकर्ण्य वचो देव्याः स दूतोऽमर्षपूरितः।
समाचष्ट समागम्य दैत्यराजाय विस्तरात्।।२।।

तस्य दूतस्य तद्वाक्यमाकर्ण्यासुरराट् ततः।
सक्रोधः प्राह दैत्यानामधिपं धूम्रलोचनम्।।३।।

हे धूम्रलोचनाशु त्वं स्वसैन्यपरिवारितः।
तामानय बलाद् दुष्टां केशाकर्षणविह्वलाम्।।४।।

तत्परित्राणदः कश्चिद्यदि वोत्तिष्ठतेऽपरः।
स हन्तव्योऽमरो वापि यक्षो गन्धर्व एव वा।।५।।

ऋषिरुवाच।।६।।

तेनाज्ञप्तस्ततः शीघ्रं स दैत्यो धूम्रलोचनः।
वृतः षष्ट्या सहस्राणामसुराणां द्रुतं ययौ।।७।।

स दृष्ट्वा तां ततो देवीं तुहिनाचलसंस्थिताम्।
जगादोच्चैः प्रयाहीति मूलं शुम्भनिशुम्भयोः।।८।।

न चेत्प्रीत्याद्य भवती मद्भर्तारमुपैष्यति।
ततो बलान्नयाम्येष केशाकर्षणविह्वलाम्।।९।।

देव्युवाच।।१०।।

दैत्येश्वरेण प्रहितो बलवान् बलसंवृतः।
बलान्नयसि मामेवं ततः किं ते करोम्यहम्।।११।।

ऋषिरुवाच।।१२।।

इत्युक्तः सोऽभ्यधावत्तामसुरो धूम्रलोचनः।
हुंकारेणैव तं भस्म सा चकाराम्बिका ततः।।१३।।

अथ क्रुद्धं महासैन्यमसुराणां तथाम्बिका[१]।
ववर्ष सायकैस्तीक्ष्णैस्तथा शक्तिपरश्वधैः।।१४।।

ततो धुतसटः कोपात्कृत्वा नादं सुभैरवम्।
पपातासुरसेनायां सिंहो देव्याः स्ववाहनः।।१५।।

कांश्चित् करप्रहारेण दैत्यानास्येन चापरान्।
आक्रम्य[२] चाधरेणान्यान्[३] स जघान[४] महासुरान्।।१६।।

---

१. पा० – तथाम्बिकाम्। २. पा० – आक्रान्त्या। ३. चरणेनान्यान्। ४. यहाँ तीन तरह के पाठान्तर मिलते हैं – संजघान, निजघान, जघान सुमहा०।

केषांचित्पाटयामास नखैः कोष्ठानि केसरी[1]।
तथा तलप्रहारेण शिरांसि कृतवान् पृथक्।।१७।।

विच्छिन्नबाहुशिरसः कृतास्तेन तथापरे।
पपौ च रुधिरं कोष्ठादन्येषां धुतकेसरः।।१८।।

क्षणेन तद्बलं सर्वं क्षयं नीतं महात्मना।
तेन केसरिणा देव्या वाहनेनातिकोपिना।।१९।।

श्रुत्वा तमसुरं देव्या निहतं धूम्रलोचनम्।
बलं क्षयितं कृत्स्नं देवीकेसरिणा ततः।।२०।।

चुकोप दैत्याधिपतिः शुम्भः प्रस्फुरिताधरः।
आज्ञापयामास च तौ चण्डमुण्डौ महासुरौ।।२१।।

हे चण्ड हे मुण्ड बलैर्बहुभिः[2] परिवारितौ।
तत्र गच्छत गत्वा च सा समानीयतां लघु।।२२।।

केशेष्वाकृष्य बद्ध्वा वा यदि वः संशयो युधि।
तदाशेषायुधैः सर्वैरसुरैर्विनिहन्यताम्।।२३।।

तस्यां हतायां दुष्टायां सिंहे च विनिपातिते।
शीघ्रमागम्यतां बद्ध्वा गृहीत्वा तामथाम्बिकाम्।।ॐ।।२४।।

इति श्रीमार्कण्डेयपुराणे सावर्णिके मन्वन्तरे देवीमाहात्म्ये शुम्भनिशुम्भसेनानीधूम्रलोचनवधो नाम षष्ठोऽध्यायः।।६।।

उवाच ४, श्लोकाः २०, एवम् २४,

एवमादितः ४१२।।

---

१. पा० किशरी। २. पा० —लैः।

सप्तमोऽध्यायः

चण्ड और मुण्डका वध

ध्यानम्

ॐ ध्यायेयं रत्नपीठे शुककलपठितं शृण्वतीं श्यामलाङ्गीं
न्यस्तैकाङ्घ्रिं सरोजे शशिशकलधरां वल्लकीं वादयन्तीम्।
कह्लाराबद्धमालां नियमितविलसच्चोलिकां रक्तवस्त्रां
मातङ्गीं शङ्खपात्रां मधुरमधुमदां चित्रकोद्भासिभालाम्।।

'ॐ' ऋषिरुवाच।।१।।

आज्ञप्तास्ते ततो दैत्याश्चण्डमुण्डपुरोगमाः।
चतुरङ्गबलोपेता ययुरभ्युद्यतायुधाः।।२।।

ददृशुस्ते ततो देवीमीषद्धासां व्यवस्थिताम्।
सिंहस्योपरि शैलेन्द्रशृङ्गे महति काञ्चने।।३।।

ते दृष्ट्वा तां समादातुमुद्यमं चक्रुरुद्यताः।
आकृष्टचापासिधरास्तथान्ये तत्समीपगाः।।४।।

ततः कोपं चकारोच्चैरम्बिका तानरीन् प्रति।
कोपेन चास्या वदनं मषी[1]वर्णमभूत्तदा।।५।।

---

१. पा० —मसी०।

भ्रुकुटीकुटिलात्तस्या ललाटफलकाद्द्रुतम्।
काली करालवदना विनिष्क्रान्तासिपाशिनी।।६।।

विचित्रखट्वाङ्गधरा नरमालाविभूषणा।
द्वीपिचर्मपरीधाना शुष्कमांसातिभैरवा।।७।।

अतिविस्तारवदना जिह्वाललनभीषणा।
निमग्नारक्तनयना नादापूरितदिङ्मुखा।।८।।

सा वेगेनाभिपतिता घातयन्ती महासुरान्।
सैन्ये तत्र सुरारीणामभक्षयत तद्बलम्।।९।।

पार्ष्णिग्राहाङ्कुशग्राहियोधघण्टासमन्वितान्।
समादायैकहस्तेन मुखे चिक्षेप वारणान्।।१०।।

तथैव योधं तुरगै रथं सारथिना सह।
निक्षिप्य वक्त्रे दशनैश्चर्वयन्त्य[1]तिभैरवम्।।११।।

एकं जग्राह केशेषु ग्रीवायामथ चापरम्।
पादेनाक्रम्य चैवान्यमुरसान्यमपोथयत्।।१२।।

तैर्मुक्तानि च शस्त्राणि महास्त्राणि तथासुरैः।
मुखेन जग्राह रुषा दशनैर्मथितान्यपि।।१३।।

बलिनां तद् बलं सर्वमसुराणां दुरात्मनाम्।
ममर्दाभक्षयच्चान्यानन्यांश्चाताडयत्तथा।।१४।।

---

१. पा० — यत्यति।

असिना निहताः केचित्केचित्खट्वाङ्गताडिताः[१]।
जग्मुर्विनाशमसुरा दन्ताग्रभिहतास्तथा।।१५।।
क्षणेन तद् बलं सर्वमसुराणां निपातितम्।
दृष्ट्वा चण्डोऽभिदुद्राव तां कालीमतिभीषणाम्।।१६।।
शरवर्षैर्महाभीमैर्भीमाक्षीं तां महासुरः।
छादयामास चक्रैश्च मुण्डः क्षिप्तैः सहस्रशः।।१७।।
ततो जहासातिरुषा भीमं भैरवनादिनी।
कालीकरालवक्त्रान्तर्दुर्दर्शदशनोज्ज्वला।।१९।।
उत्थाय च महासिं हं देवी चण्डमधावत।
गृहीत्वा चास्य केशेषु शिरस्तेनासिनाच्छिनत्[२]।।२०।।
अथ मुण्डोऽभ्यधावत्तां दृष्ट्वा चण्डं निपातितम्।
तमप्यपातयद्भूमौ सा खड्गाभिहतं रुषा।।२१।।
हतशेषं ततः सैन्यं दृष्ट्वा चण्डं निपातितम्।
मुण्डं च सुमहावीर्यं दिशो भेजे भयातुरम्।।२२।।
शिरश्चण्डस्य काली च गृहीत्वा मुण्डमेव च।
प्राह प्रचण्डाट्टहासमिश्रमभ्येत्य चण्डिकाम्।।२३।।

---

१. पा० तारणे २. शान्तनवी टीकाकारने यहाँ एक श्लोक अधिक पाठ माना है, जो इस प्रकार है

'छिन्ने शिरसि दैत्येन्द्रश्चक्रे नादं सुभैरवम्।
तेन नादेन महता त्रासितं भुवनत्रयम्।।

मया तवात्रोपहृतौ चण्डमुण्डौ महापशू।
युद्धयज्ञे स्वयं शुम्भं निशुम्भं च हनिष्यसि।।२४।।

ऋषिरुवाच।।२५।।

तावानीतौ ततो दृष्ट्वा चण्डमुण्डौ महासुरौ।
उवाच कालीं कल्याणी ललितं चण्डिका वचः।।२६।।

यस्माच्चण्डं च मुण्डं च गृहीत्वा त्वमुपागता।
चामुण्डेति ततो लोके ख्याता देवि भविष्यसि।।ॐ।।२७।।

इति श्रीमार्कण्डेयपुराणे सावर्णिके मन्वन्तरे देवीमाहात्म्ये
चण्डमुण्डवधो नाम सप्तमोऽध्यायः।।७।।
उवाच २, श्लोकाः २५, एवम् २७
एवमादितः ४३९।।

अष्टमोऽध्यायः

रक्तबीज-वध

ध्यानम्

ॐ अरुणां करुणातरङ्गिताक्षीं
धृतपाशाङ्कुशबाणचापहस्ताम्।
अणिमादिभिरावृतां मयूखै-
रहमित्येव विभावये भवानीम्॥

'ॐ' ऋषिरुवाच॥१॥

चण्डे च निहते दैत्ये मुण्डे च विनिपातिते।
बहुलेषु च सैन्येषु क्षयितेष्वसुरेश्वरः॥२॥

ततः कोपपराधीनचेताः शुम्भः प्रतापवान्।
उद्योगं सर्वसैन्यानां दैत्यानामादिदेश ह॥३॥

अद्य सर्वबलैर्दैत्याः षडशीतिरुदायुधाः।
कम्बूनां चतुरशीतिर्निर्यान्तु स्वबलैर्वृताः॥४॥

कोटिवीर्याणि पञ्चाशदसुराणां कुलानि वै।
शतं कुलानि धौम्राणां निर्गच्छन्तु ममाज्ञया॥५॥

कालका दौर्हृदा मौर्याः कालकेयास्तथासुराः।
युद्धाय सज्जा निर्यान्तु आज्ञया त्वरिता मम॥६॥

इत्याज्ञाप्यासुरपतिः शुम्भो भैरवशासनः।
निर्जगाम महासैन्यसहस्रैर्बहुभिर्वृतः॥७॥

आयान्तं चण्डिका दृष्ट्वा तत्सैन्यमतिभीषणम्।
ज्यास्वनैः पूरयामास धरणीगगनान्तरम्॥८॥

ततः[१] सिंहो महानादमतीव कृतवान् नृप।
घण्टास्वनेन तन्नादमम्बिका[२] चोपबृंहयत्॥९॥

धनुर्ज्यासिंहघण्टानां नादापूरितदिङ्मुखा।
निनादैर्भीषणैः काली जिग्ये विस्तारितानना॥१०॥

तं निनादमुपश्रुत्य दैत्यसैन्यैश्चतुर्दिशम्।
देवी सिंहस्तथा काली सरोषैः परिवारिताः॥११॥

एतस्मिन्नन्तरे भूप विनाशाय सुरद्विषाम्।
भवायामरसिंहानामतिवीर्यबलान्विताः॥१२॥

ब्रह्मेशगुहविष्णूनां तथेन्द्रस्य च शक्तयः।
शरीरेभ्यो विनिष्क्रम्य तद्रूपैश्चण्डिकां ययुः॥१३॥

यस्य देवस्य यद्रूपं यथाभूषणवाहनम्।
तद्वदेव हि तच्छक्तिरसुरान् योद्धुमाययौ॥१४॥

हंसयुक्तविमानाग्रे साक्षसूत्रकमण्डलुः।
आयाता ब्रह्मणः शक्तिर्ब्रह्माणी साभिधीयते॥१५॥

---

१. पा० — च। २. पा० — तान्नादानम्बिका।

माहेश्वरी वृषारूढा त्रिशूलवरधारिणी।
महाहिवलया प्राप्ता चन्द्ररेखाविभूषणा।।१६।।
कौमारी शक्तिहस्ता च मयूरवरवाहना।
योद्धुमभ्याययौ दैत्यानम्बिका गुहरूपिणी।।१७।।
तथैव वैष्णवी शक्तिर्गरुडोपरि संस्थिता।
शङ्खचक्रगदाशार्ङ्गखड्गहस्ताभ्युपाययौ।।१८।।
यज्ञ[1]वाराहमतुलं रूपं या बिभ्रतो[2] हरेः।
शक्तिः साप्याययौ तत्र वाराहीं बिभ्रती तनुम्।। १९।।
नारसिंही नृसिंहस्य बिभ्रती सदृशं वपुः।
प्राप्ता तत्र सटाक्षेपक्षिप्तनक्षत्रसंहतिः।।२०।।
वज्रहस्ता तथैवैन्द्री गजराजोपरि स्थिता।
प्राप्ता सहस्रनयना यथा शक्रस्तथैव सा।।२१।।
ततः परिवृतस्ताभिरीशानो देवशक्तिभिः।
हन्यन्तामसुराः शीघ्रं मम प्रीत्याऽऽह चण्डिकाम्।। २२ ।।
ततो देवीशरीरात्तु विनिष्क्रान्तातिभीषणा।
चण्डिकाशक्तिरत्युग्रा शिवाशतनिनादिनी।।२३।।
सा चाह धूम्रजटिलमीशानमपराजिता।
दूत त्वं गच्छ भगवान् पार्श्वं शुम्भनिशुम्भयोः।। २४ ।।

---

१. पा० – जज्ञे वाराह०। २. पा० – ती।

ब्रूहि शुम्भं निशुम्भं च दानवावतिगर्वितौ।
ये चान्ये दानवास्तत्र युद्धाय समुपस्थिताः।। २५।।

त्रैलोक्यमिन्द्रो लभतां देवाः सन्तु हविर्भुजः।
यूयं प्रयात पातालं यदि जीवितुमिच्छथ।।२६।।

बलावलेपादथ चेद्भवन्तो युद्धकाङ्क्षिणः।
तदागच्छत तृप्यन्तु मच्छिवाः पिशितेन वः।। २७।।

यतो नियुक्तो दौत्येन तया देव्या शिवः स्वयम्।
शिवदूतीति लोकेऽस्मिंस्ततः सा ख्यातिमागता।। २८ ।।

तेऽपि श्रुत्वा वचो देव्याः शर्वाख्यातं महासुराः।
अमर्षापूरिता जग्मुर्यत्र[१] कात्यायनी स्थिता।। २९।।

ततः प्रथममेवाग्रे शरशक्त्यृष्टिवृष्टिभिः।
ववर्षुरुद्धतामर्षास्तां देवीममरारयः ।। ३०।।

सा च तान् प्रहितान् बाणाञ्छूलशक्तिपरश्वधान्।
चिच्छेद लीलयाऽऽध्मातधनुर्मुक्तैर्महेषुभिः।।३१।।

तस्याग्रतस्तथा काली शूलपातविदारितान्।
खट्वाङ्गपोथितांश्चारीन् कुर्वती व्यचरत्तदा।।३२।।

कमण्डलुजलाक्षेपहतवीर्यान् हतौजसः।
ब्रह्माणी चाकरोच्छत्रून् येन येन स्म धावति।।३३।।

---

१. पा० — जग्मुर्यतः।

माहेश्वरी त्रिशूलेन तथा चक्रेण वैष्णवी।
दैत्याञ्जघान कौमारी तथा शक्त्यातिकोपना।।३४।।

ऐन्द्रीकुलिशपातेन शतशो दैत्यदानवाः।
पेतुर्विदारिताः पृथ्व्यां रुधिरौघप्रवर्षिणः।।३५।।

तुण्डप्रहारविध्वस्ता दंष्ट्राग्रक्षतवक्षसः।
वाराहमूर्त्या न्यपतंश्चक्रेण च विदारिताः।।३६।।

नखैर्विदारितांश्चान्यान् भक्षयन्ती महासुरान्।
नारसिंही चचाराजौ नादापूर्णदिगम्बरा।।३७।।

चण्डाट्टहासैरसुराः शिवदूत्यभिदूषिताः।
पेतुः पृथिव्यां पतितांस्तांश्चखादाथ सा तदा।।३८।।

इति मातृगणं क्रुद्धं मर्दयन्तं महासुरान्।
दृष्ट्वाभ्युपायैर्विविधैर्नेशुर्देवारिसैनिकाः ।।३९।।

पलायनपरान् दृष्ट्वा दैत्यान् मातृगणार्दितान्।
योद्धुमभ्याययौ क्रुद्धो रक्तबीजो महासुरः।।४०।।

रक्तबिन्दुर्यदा भूमौ पतत्यस्य शरीरतः।
समुत्पतति मेदिन्यां[1] तत्प्रमाणस्तदासुरः।।४१।।

युयुधे स गदापाणिरिन्द्रशक्त्या महासुरः।
ततश्चैन्द्री स्ववज्रेण रक्तबीजमताडयत्।।४२।।

---

१. पा० – न्यास्त०।

कुलिशेनाहतस्याशु बहु[1] सुस्राव शोणितम्।
समुत्तस्थुस्ततो योधास्तद्रूपास्तत्पराक्रमाः।।४३।।

यावन्तः पतितास्तस्य शरीराद्रक्तबिन्दवः।
तावन्तः पुरुषा जातास्तद्वीर्यबलविक्रमाः।।४४।।

ते चापि युयुधुस्तत्र पुरुषा रक्तसम्भवाः।
समं मातृभिरत्युग्रशस्त्रपातातिभीषणम्।।४५।।

पुनश्च वज्रपातेन क्षतमस्य शिरो यदा।
ववाह रक्तं पुरुषास्ततो जाताः सहस्रशः।।४६।।

वैष्णवी समरे चैनं चक्रेणाभिजघान ह।
गदया ताडयामास ऐन्द्री तमसुरेश्वरम्।।४७।।

वैष्णवीचक्रभिन्नस्य रुधिरस्रावसम्भवैः।
सहस्रशो जगद्व्याप्तं तत्प्रमाणैर्महासुरैः।।४८।।

शक्त्या जघान कौमारी वाराही च तथासिना।
माहेश्वरी त्रिशूलेन रक्तबीजं महासुरम्।।४९।।

स चापि गदया दैत्यः सर्वा एवाहनत् पृथक्।
मातृः कोपसमाविष्टो रक्तबीजो महासुरः।।५०।।

तस्याहतस्य बहुधा शक्तिशूलादिभिर्भुवि।
पपात यो वै रक्तौघस्तेनासञ्छतशोऽसुराः।।५१।।

---

१. पा० — तस्य।

तैश्चासुरासृक्सम्भूतैरसुरैः सकलं जगत्।
व्याप्तमासीत्ततो देवा भयमाजग्मुरुत्तमम्।।५२।।

तान् विषण्णान् सुरान् दृष्ट्वा चण्डिका प्राह सत्वरा।
उवाच कालीं चामुण्डे विस्तीर्णं[1] वदनं कुरु।।५३।।

मच्छस्त्रपातसम्भूतान् रक्तबिन्दून्महासुरान्।
रक्तबिन्दोः प्रतीच्छ त्वं वक्त्रेणानेन वेगिना[2]।।५४।।

भक्षयन्ती चर रणे तदुत्पन्नान्महासुरान्।
एवमेष क्षयं दैत्यः क्षीणरक्तो गमिष्यति।।५५।।

भक्ष्यमाणास्त्वया चोग्रा न चोत्पत्स्यन्ति चापरे[3]।
इत्युक्त्वा तां ततो देवी शूलेनाभिजघान तम्।।५६।।

मुखेन काली जगृहे रक्तबीजस्य शोणितम्।
ततोऽसावाजघानाथ गदया तत्र चण्डिकाम्।।५७।।

न चास्या वेदनां चक्रे गदापातोऽल्पिकामपि।
तस्याहतस्य देहात्तु बहु सुस्राव शोणितम्।।५८।।

यतस्ततस्तद्वक्त्रेण चामुण्डा सम्प्रतीच्छति।
मुखे समुद्गता येऽस्या रक्तपातान्महासुराः।।५९।।

---

१. पा० — विस्तरं।

२. पा० — वेगिता। ३. सके बाद कहीं-कहीं 'ऋषिरुवाच' इतना अधिक पाठ है।

तांश्चखादाथ चामुण्डा पपौ तस्य च शोणितम्।
देवी शूलेन वज्रेण[1] बाणैरसिभिर्ऋष्टिभिः।।६०।।

जघान रक्तबीजं तं चामुण्डापीतशोणितम्।
स पपात महीपृष्ठे शस्त्रसङ्घसमा[2]हतः।।६१।।

नीरक्तश्च महीपाल रक्तबीजो महासुरः।
ततस्ते हर्षमतुलमवापुस्त्रिदशा नृप।।६२।।

तेषां मातृगणो जातो ननर्तासृङ्मदोद्धतः।।ॐ।।६३।।

इति श्रीमार्कण्डेयपुराणे सावर्णिके मन्वन्तरे देवीमाहात्म्ये रक्तबीजवधो नामाष्टमोऽध्यायः।।८।।

उवाच १, अर्धश्लोकः १, श्लोकाः ६१, एवम् ६३, एवमादितः ५०२।।

१. पा० — चक्रेण। २. पा० — शस्त्रसहतितो हतः।

नवमोऽध्यायः

निशुम्भ-वध

ध्यानम्

ॐ बन्धूककाञ्चननिभं रुचिराक्षमालां
पाशाङ्कुशौ च वरदां निजबाहुदण्डैः।
बिभ्राणमिन्दुशकलाभरणं त्रिनेत्र-
मर्धाम्बिकेशमनिशं वपुराश्रयामि॥

'ॐ' राजोवाच॥१॥

विचित्रमिदमाख्यातं भगवन् भवता मम।
देव्याश्चरितमाहात्म्यं रक्तबीजवधाश्रितम्॥२॥
भूयश्चेच्छाम्यहं श्रोतुं रक्तबीजे निपातिते।
चकार शुम्भो यत्कर्म निशुम्भश्चातिकोपनः॥३॥

ऋषिरुवाच॥४॥

चकार कोपमतुलं रक्तबीजे निपातिते।
शुम्भासुरो निशुम्भश्च हतेष्वन्येषु चाहवे॥५॥
हन्यमानं महासैन्यं विलोक्यामर्षमुद्वहन्।
अभ्यधावन्निशुम्भोऽथ मुख्ययासुरसेनया॥६॥
तस्याग्रतस्तथा पृष्ठे पार्श्वयोश्च महासुराः।
संदष्टौष्ठपुटाः क्रुद्धा हन्तुं देवीमुपाययुः॥७॥

आजगाम महावीर्यः शुम्भोऽपि स्वबलैर्वृतः।
निहन्तुं चण्डिकां कोपात्कृत्वा युद्धं तु मातृभिः।।८।।

ततो युद्धमतीवासीद्देव्या शुम्भनिशुम्भयोः।
शरवर्षमतीवोग्रं मेघयोरिव वर्षतोः।।९।।

चिच्छेदास्ताञ्छरांस्ताभ्यां चण्डिका स्व[1]शरोत्करैः।
ताडयामास चाङ्गेषु शस्त्रौघैरसुरेश्वरौ।।१०।।

निशुम्भो निशितं खड्गं चर्म चादाय सुप्रभम्।
अताडयन्मूर्ध्नि सिंहं देव्या वाहनमुत्तमम्।।११।।

ताडिते वाहने देवी क्षुरप्रेणासिमुत्तमम्।
निशुम्भस्याशु चिच्छेद चर्म चाप्यष्टचन्द्रकम्।।१२।।

छिन्ने चर्मणि खड्गे च शक्तिं चिक्षेप सोऽसुरः।
तामप्यस्य द्विधा चक्रे चक्रेणाभिमुखागताम्।।१३।।

कोपाध्मातो निशुम्भोऽथ शूलं जग्राह दानवः।
आयातं[2] मुष्टिपातेन देवी तच्चाप्यचूर्णयत्।।१४।।

आविध्याथ[3] गदां सोऽपि चिक्षेप चण्डिकां प्रति।
सापि देव्या त्रिशूलेन भिन्ना भस्मत्वमागता।।१५।।

ततः परशुहस्तं तमायान्तं दैत्यपुङ्गवम्।
आहत्य देवी बाणौघैरपातयत भूतले।।१६।।

---

१. पा० – ऽऽशु शरोत्करैः।

२. पा० – आयान्तं। ३. अथादाय।

तस्मिन्निपतिते भूमौ निशुम्भे भीमविक्रमे।
भ्रातर्यतीव संक्रुद्धः प्रययौ हन्तुमम्बिकाम्।।१७।।
स रथस्थस्तथात्युच्चैर्गृहीतपरमायुधैः।
भुजैरष्टाभिरतुलैर्व्याप्याशेषं बभौ नभः।।१८।।
तमायान्तं समालोक्य देवी शङ्खमवादयत्।
ज्याशब्दं चापि धनुषश्चकारातीव दुःसहम्।।१९।।
पूरयामास ककुभो निजघण्टास्वनेन च।
समस्तदैत्यसैन्यानां तेजोवधविधायिना।।२०।।
ततः सिंहो महानादैस्त्याजितेभमहामदैः।
पूरयामास गगनं गां तथैव[1] दिशो दश।।२१।।
ततः काली समुत्पत्य गगनं क्ष्मामताडयत्।
कराभ्यां तन्निनादेन प्राक्स्वनास्ते तिरोहिताः।।२२।।
अट्टाट्टहासमशिवं शिवदूती चकार ह।
तैः शब्दैरसुरास्त्रेसुः शुम्भः कोपं परं ययौ।।२३।।
दुरात्मंस्तिष्ठ तिष्ठेति व्याजहाराम्बिका यदा।
तदा जयेत्यभिहितं देवैराकाशसंस्थितैः।।२४।।
शुम्भेनागत्य या शक्तिर्मुक्ता ज्वालातिभीषणा।
आयान्ती वह्निकूटाभा सा निरस्ता महोल्कया।।२५।।

---

१. पा० – तथोपदिशो।

सिंहनादेन शुम्भस्य व्याप्तं लोकत्रयान्तरम्।
निर्घातनिःस्वनो घोरो जितवानवनीपते।।२६।।

शुम्भमुक्ताञ्छरान्देवी शुम्भस्तत्प्रहिताञ्छरान्।
चिच्छेद स्वशरैरुग्रैः शतशोऽथ सहस्रशः।।२७।।

ततः सा चण्डिका क्रुद्धा शूलेनाभिजघान तम्।
स तदाभिहतो भूमौ मूर्च्छितो निपपात ह।।२८।।

ततो निशुम्भः सम्प्राप्य चेतनामात्तकार्मुकः।
आजघान शरैर्देवी कालीं केसरिणं तथा।।२९।।

पुनश्च कृत्वा बाहूनामयुतं दनुजेश्वरः।
चक्रायुधेन दितिजश्छादयामास चण्डिकाम्।।३०।।

ततो भगवती क्रुद्धा दुर्गा दुर्गार्तिनाशिनी।
चिच्छेद तानि चक्राणि स्वशरैः सायकांश्च तान्।।३१।।

ततो निशुम्भो वेगेन गदामादाय चण्डिकाम्।
अभ्यधावत वै हन्तुं दैत्यसेनासमावृतः।।३२।।

तस्यापतत एवाशु गदां चिच्छेद चण्डिका।
खड्गेन शितधारेण स च शूलं समाददे।।३३।।

शूलहस्तं समायान्तं निशुम्भममरार्दनम्।
हृदि विव्याध शूलेन वेगाविद्धेन चण्डिका।।३४।।

भिन्नस्य तस्य शूलेन हृदयान्निःसृतोऽपरः।
महाबलो महावीर्यस्तिष्ठेति पुरुषो वदन्।।३५।।

तस्य निष्क्रामतो देवी प्रहस्य स्वनवत्ततः।
शिरश्चिच्छेद खड्गेन ततोऽसावपतद्भुवि।।३६।।

ततः सिंहश्चखादोग्रं[1] दंष्ट्राक्षुण्णशिरोधरान्।
असुरांस्तांस्तथा कालीः शिवदूती तथापरान्।।३७।।

कौमारीशक्तिनिर्भिन्नाः केचिन्नेशुर्महासुराः।
ब्रह्माणीमन्त्रपूतेन तोयेनान्ये निराकृताः।।३८।।

माहेश्वरीत्रिशूलेन भिन्नाः पेतुस्तथापरे।
वाराहीतुण्डघातेन केचिच्चूर्णीकृता भुवि।।३९।।

खण्डं[2] खण्डं च चक्रेण वैष्णव्या दानवाः कृताः।
वज्रेण चैन्द्रीहस्ताग्रविमुक्तेन तथापरे।।४०।।

केचिद्विनेशुरसुराः केचिन्नष्टा महाहवात्
भक्षिताश्चापरे कालीशिवदूतीमृगाधिपैः।।ॐ।।४१।।

इति श्रीमार्कण्डेयपुराणे सावर्णिके मन्वन्तरे देवीमाहात्म्ये
निशुम्भवधो नाम नवमोऽध्यायः।।९।।

उवाच २, श्लोकः ३९, एवम् ४१,
एवमादितः ५४३।।

---

१. पा० – दोग्रदंष्ट्र०। २. पा० – खण्डखण्डं।

दशमोऽध्यायः

शुम्भ-वध

ध्यानम्

ॐ उत्तप्तहेमरुचिरां रविचन्द्रवह्नि-
नेत्रां धनुश्शरयुताङ्कुशपाशशूलम्।
रम्यैर्भुजैश्च दधतीं शिवशक्तिरूपां
कामेश्वरीं हृदि भजामि धृतेन्दुलेखाम्।।

'ॐ' *ऋषिरुवाच।।१।।*

निशुम्भं निहतं दृष्ट्वा भ्रातरं प्राणसम्मितम्।
हन्यमानं बलं चैव शुम्भः क्रुद्धोऽब्रवीद्वचः।।२।।
बलावलेपा[1]द्दुष्टे त्वं मा दूर्गे गर्वमावह।
अन्यासां बलमाश्रित्य युद्धयसे यातिमानिनी।।३।।

देव्युवाच।।४।।

एकैवाहं जगत्यत्र द्वितीया का ममापरा।
पश्यैता दुष्ट मय्येव विशन्त्यो मद्विभूतयः[2]।।५।।
ततः समस्तास्ता देव्यो ब्रह्माणीप्रमुखा लयम्।
तस्या देव्यास्तनौ जग्मुरेकैवासीत्तदाम्बिका।।६।।

---

१. पा० – पदु०। २. इसके बाद किसी-किसी प्रतिमे 'ऋषिरुवाच' इतना अधिक पाठ है।

देव्युवाच॥७॥

अहं विभूत्या बहुभिरिह रूपैर्यदास्थिता।
तत्संहृतं मयैकैव तिष्ठाम्याजौ स्थिरो भव॥८॥

ऋषिरुवाच॥९॥

ततः प्रववृते युद्धं देव्याः शुम्भस्य चौभयोः।
पश्यतां सर्वदेवानामसुराणां च दारुणम्॥१०॥
शरवर्षैः शितैः शस्त्रैस्तथास्त्रैश्चैव दारुणैः।
तयोर्युद्धमभूद्भूयः सर्वलोकभयङ्करम्॥११॥
दिव्यान्यस्त्राणि शतशो मुमुचे यान्यथाम्बिका।
बभञ्ज तानि दैत्येन्द्रस्तत्प्रतीघातकर्तृभिः॥१२॥
मुक्तानि तेन चास्त्राणि दिव्यानि परमेश्वरी।
बभञ्ज लीलयैवोग्रहु[१]ङ्कारोच्चारणादिभिः॥१३॥
ततः शरशतैर्देवीमाच्छादयत सोऽसुरः।
सापि[२] तत्कुपिता देवी धनुश्चिच्छेद चेषुभिः॥१४॥
छिन्ने धनुषि दैत्येन्द्रस्तथा शक्तिमथाददे।
चिच्छेद देवी चक्रेण तामप्यस्य करे स्थिताम्॥१५॥
ततः खड्गमुपादाय शतचन्द्रं च भानुमत्।
अभ्यधावत्त[३]दा देवीं दैत्यानामधिपेश्वरः॥१६॥

---

१. पा० – हू०। २. पा० – सा च। ३. पा० – वत तां हन्तुं दैत्या०।

तस्यापतत एवाशु खड्गं चिच्छेद चण्डिका।
धनुर्मुक्तैः शितैर्बाणैश्चर्म चार्ककरामलम्[१]।।१७।।

हताश्वः स तदा दैत्यश्छिन्नधन्वा विसारथिः।
जग्राह मुद्गरं घोरमम्बिकानिधनोद्यतः।।१८।।

चिच्छेदापततस्तस्य मुद्गरं निशितैः शरैः।
तथापि सोऽभ्यधावत्तां मुष्टिमुद्यम्य वेगवान्।।१९।।

स मुष्टिं पातयामास हृदये दैत्यपुङ्गवः।
देव्यास्तं चापि सा देवी तलेनोरस्यताडयत्।।२०।।

तलप्रहाराभिहतो निपपात महीतले।
स दैत्यराजः सहसा पुनरेव तथोत्थितः।।२१।।

उत्पत्य च प्रगृह्योच्चैर्देवीं गगनमास्थितः।
तत्रापि सा निराधारा युयुधे तेन चण्डिका।।२२।।

नियुद्धं खे तदा दैत्यश्चण्डिका च परस्परम्।
चक्रतुः प्रथमं सिद्धमुनिविस्मयकारकम्।।२३।।

ततो नियुद्धं सुचिरं कृत्वा तेनाम्बिका सह।
उत्पात्य भ्रामयामास चिक्षेप धरणीतले।।२४।।

स क्षिप्तो धरणीं प्राप्य मुष्टिमुद्यम्य वेगितः[२]।
अभ्यधावत दुष्टात्मा चण्डिकानिधनेच्छया।।२५।।

---

१. इसके बाद किसी-किसी प्रति में — 'अश्वांश्च पातयामास रथं सारथिना सह।' इनना अधिक पाठ है। २. पा० — वेगवान्।

तमायान्तं ततो देवी सर्वदैत्यजनेश्वरम्।
जगत्यां पातयामास भित्त्वा शूलेन वक्षसि।।२६।।

स गतासुः पपातोर्व्यां देवीशूलाग्रविक्षतः।
चालयन् सकलां पृथ्वीं साब्धिद्वीपां सपर्वताम्।।२७।।

ततः प्रसन्नमखिलं हते तस्मिन् दुरात्मनि।
जगत्स्वास्थ्यमतीवाप निर्मलं चाभवन्नभः।।२८।।

उत्पातमेघाः सोल्का ये प्रागासंस्ते शमं ययुः।
सरितो मार्गवाहिन्यस्तथासंस्तत्र पातिते।।२९।।

ततो देवगणाः सर्वे हर्षनिर्भरमानसाः।
बभूवुर्निहते तस्मिन् गन्धर्वा ललितं जगुः।।३०।।

अवादयंस्तथैवान्ये ननृतुश्चाप्सरोगणाः।
ववुः पुण्यास्तथा वाताः सुप्रभोऽभूद्दिवाकरः।।३१।।

जज्वलुश्चाग्नयःशान्ताः शान्ता दिग्जनितस्वनाः।।ॐ।।३२।।

इति श्रीमार्कण्डेयपुराणे सावर्णिके मन्वन्तरे देवीमाहात्म्ये
शुम्भवधो नाम नवमोऽध्यायः।।९।।

उवाच ४, अर्धश्लोकः १, श्लोकाः २७, एवम् ३२,
एवमादितः ५७५।।

एकादशोऽध्याय:

देवताओं द्वारा देवी की स्तुति तथा देवी द्वारा देवताओं को वरदान

ध्यानम्

'ॐ' बालरविद्युतिमिन्दुकिरीटां तुङ्गकुचां नयनत्रययुक्ताम्।
स्मेरमुखी वरदाङ्कुशपाशाभीतिकरां प्रभजे भुवनेशीम्।।

'ॐ ऋषिरुवाच।।१।।

देव्या हते तत्र महासुरेन्द्रे
सेन्द्राः सुरा वह्निपुरोगमास्ताम्।
कात्यायनीं तुष्टुवुरिष्ट[1]लाभाद्
विकाशिवक्त्राब्ज[2]विकाशिताशाः।।२।।

देवि प्रपन्नार्तिहरे प्रसीद
प्रसीद मातर्जगतोऽखिलस्य।
प्रसीद विश्वेश्वरि पाहि विश्वं
त्वमीश्वरी देवि चराचरस्य।।३।।

---

१. पा० — लम्भा०। २. पा० — वक्त्रास्तु वि०।

आधारभूता जगतस्त्वमेका
महीस्वरूपेण यतः स्थितासि।
अपां स्वरूपस्थितया त्वयैत-
दाप्यायते कृत्स्नमलङ्घ्यवीर्ये।।४।।

त्वं वैष्णवी शक्तिरनन्तवीर्या
विश्वस्य बीजं परमासि माया।
सम्मोहितं देवि समस्तमेतत्
त्वं वै प्रसन्ना भुवि मुक्तिहेतुः।।५।।

विद्याः समस्तास्तव देवि भेदाः
स्त्रियः समास्ताः सकला जगत्सु।
त्वयैकया पूरितमम्बयैतत्
का ते स्तुतिः स्तव्यपरा परोक्तिः।।६।।

सर्वभूता यदा देवी स्वर्गमुक्ति[1]प्रदायिनी।
त्वं स्तुता स्तुतये का वा भवन्तु परमोक्तयः।।७।।

सर्वस्य बुद्धिरूपेण जनस्य हृदि संस्थिते।
स्वर्गापवर्गदे देवि नारायणि नमोऽस्तु ते।।८।।

कलाकाष्ठादिरूपेण परिणामप्रदायिनि।
विश्वस्योपरतौ शक्ते नारायणि नमोऽस्तु ते।।९।।

सर्वमङ्गलमङ्गल्ये[2] शिवे सर्वार्थसाधिके।
शरण्ये त्र्यम्बके गौरि नारायणि नमोऽस्तु ते।।१०।।

---

१. पा० – भुक्ति। २. पा० – माङ्गल्ये।

सृष्टिस्थितिविनाशानां शक्तिभूते सनातनि।
गुणाश्रये गुणमये नारायणि नमोऽस्तु ते।।११।।

शरणागतदीनार्तपरित्राणपरायणे ।
सर्वस्यार्तिहरे देवि नारायणि नमोऽस्तु ते।।१२।।

हंसयुक्तविमानस्थे ब्रह्माणीरूपधारिणि।
कौशाम्भः क्षरिके देवि नारायणि नमोऽस्तु ते।।१३।।

त्रिशूलचन्द्राहिधरे महावृषभवाहिनि।
माहेश्वरीस्वरूपेण नारायणि नमोऽस्तु ते।।१४।।

मयूरकुक्कुटवृते महाशक्तिधरेऽनघे।
कौमारीरूपसंस्थाने नारायणि नमोऽस्तु ते।।१५।।

शङ्खचक्रगदाशार्ङ्गगृहीतपरमायुधे ।
प्रसीद वैष्णवीरूपे नारायणि नमोऽस्तु ते।।१६।।

गृहीतोग्रमहाचक्रे दंष्ट्रोद्धृतवसुंधरे।
वराहरूपिणि शिवे नारायणि नमोऽस्तु ते।।१७।।

नृसिंहरूपेणोग्रेण हन्तुं दैत्यान् कृतोद्यमे।
त्रैलोक्यत्राणसहिते नारायणि नमोऽस्तु ते।।१८।।

किरीटिनि महावज्रे सहस्त्रनयनोज्ज्वले।
वृत्रप्राणहरे चैन्द्रि नारायणि नमोऽस्तु ते।।१९।।

शिवदूतीस्वरूपेण हतदैत्यमहाबले।
घोररूपे महारावे नारायणि नमोऽस्तु ते।।२०।।

दंष्ट्राकरालवदने शिरोमालाविभूषणे।
चामुण्डे मुण्डमथने नारायणि नमोऽस्तु ते।।२१।।

लक्ष्मि लज्जे महाविद्ये श्रद्धे पु[१]ष्टिस्वधे ध्रुवे।
महारात्रि[२] महाऽविद्ये[३] नारायणि नमोऽस्तु ते।।२२।।

मेधे सरस्वति वरे भूति बाभ्रवि तामसि।
नियते त्वं प्रसीदेशे नारायणि नमोऽस्तु ते[४]।।२३।।

सर्वस्वरूपे सर्वेशे सर्वशक्तिसमन्विते।
भयेभ्यस्त्राहि नो देवि दुर्गे देवि नमोऽस्तु ते।।२४।।

एतत्ते वदनं सौम्यं लोचनत्रयभूषितम्।
पातु नः सर्वभीतिभ्यः कात्यायनि नमोऽस्तु ते।।२५।।

ज्वालाकरालमत्युग्रमशेषासुरसूदनम्।
त्रिशूलं पातु नो भीतेर्भद्रकालि नमोऽस्तु ते।।२६।।

हिनस्ति दैत्यतेजांसि स्वनेनापूर्य या जगत्।
सा घण्टा पातु नो देवि पापेभ्योऽनः सुतानिव।।२७।।

असुरासृग्वसापङ्कचर्चितस्ते करोज्ज्वलः।
शुभाय खड्गो भवतु चण्डिके त्वां नता वयम्।।२८।।

---

१. पा० – पुष्टे। २. पा० – रात्रे। ३. पा० – महामाये।
४. शान्तनवी टीकाकारने यहाँ एक श्लोक अधिक पाठ माना है, जो इस प्रकार है–

'सर्वतः पाणिपादान्ते सर्वतोऽक्षिशिरोमुखे।
सर्वतःश्रवणघ्राणे नारायणि नमोऽस्तुते।।

रोगानशेषानपहंसि तुष्टा
रुष्टा[1] तु कामान् सकलानभीष्टान्।
त्वामाश्रितानां च विपन्नराणां
त्वामाश्रिता ह्याश्रयतां प्रयान्ति।।२९।।

एतत्कृतं यत्कदनं त्वयाद्य
धर्मद्विषां देवि महासुराणाम्।
रूपैरनेकैर्बहुधाऽऽत्ममूर्तिं
कृत्वाम्बिके तत्प्रकरोति कान्या।।३०।।

विद्यासु शास्त्रेषु विवेकदीपे-
ष्वाद्येषु वाक्येषु च का त्वदन्या
ममत्वगर्तेऽतिमहान्धकारे
विभ्रामयत्येतदतीव विश्वम्।।३१।।

रक्षांसि यत्रोग्रविषाश्च नागा
यत्रारयो दस्युबलानि यत्र।
दावानलो यत्र तथाब्धिमध्ये
तत्र स्थिता त्वं परिपासि विश्वम्।।३२।।

विश्वेश्वरि त्वं परिपासि विश्वं
विश्वात्मिका धारयसीति विश्वम्।
विश्वेशवन्द्या भवती भवन्ति
विश्वाश्रया ये त्वयि भक्तिनम्राः।।३३।।

---

१. पा० – ददासि कामान्

देवि प्रसीद परिपालय नोऽरिभीते-
र्नित्यं यथासुरवधादधुनैव सद्यः।
पापानि सर्वजगतां प्रशमं[१] नयाशु
उत्पातपाकजनितांश्च महोपसर्गान्।।३४।।

प्रणतानां प्रसीद त्वं देवि विश्वार्तिहारिणि।
त्रैलोक्यवासिनामीड्ये लोकानां वरदा भव।।३५।।

देव्युवाच।।३६।।

वरदाहं सुरगणा वरं यन्मनसेच्छथ।
तं वृणुध्वं प्रयच्छामि जगतामुपकारकम्।।३७।।

देवा ऊचुः।।३८।।

सर्वाबाधाप्रशमनं त्रैलोक्यस्याखिलेश्वरि।
एवमेव त्वया कार्यमस्मद्वैरिविनाशनम्।।३९।।

देव्युवाच।।४०।।

वैवस्वतेऽन्तरे प्राप्ते अष्टविंशतिमे युगे।
शुम्भो निशुम्भश्चैवान्यावुत्पत्स्येते महासुरौ।।४१।।
नन्दगोपगृहे[२] जाता यशोदागर्भसम्भवा।
ततस्तौ नाशयिष्यामि विन्ध्याचलनिवासिनी।।४२।।
पुनरप्यतिरौद्रेण रूपेण पृथिवीतले।
अवतीर्य हनिष्यामि वैप्रचित्तांस्तु दानवान्।।४३।।

---

१. पा० – च शमं। २. पा० – कुले।

भक्षयन्त्याश्च तानुग्रान् वैप्रचित्तान्महासुरान्।
रक्ता दन्ता भविष्यन्ति दाडिमीकुसुमोपमाः।।४४।।

ततो मां देवताः स्वर्गे मर्त्यलोके च मानवाः।
स्तुवन्तो व्याहरिष्यन्ति सततं रक्तदन्तिकाम्।।४५।।

भूयश्च शतवार्षिक्यामनावृष्ट्यामनम्भसि।
मुनिभिः संस्तुता भूमौ सम्भविष्याम्ययोनिजा।।४६।।

ततः शतेन नेत्राणां निरीक्षिष्यामि यन्मुनीन्।
कीर्तयिष्यन्ति मनुजाः शताक्षीमिति मां ततः।।४७।।

ततोऽहमखिलं लोकमात्मदेहसमुद्भवैः।
भरिष्यामि सुराः शाकैरावृष्टेः प्राणधारकैः।।४८।।

शाकम्भरीति विख्यातिं तदा यास्याम्यहं भुवि।
तत्रैव च वधिष्यामि दुर्गमाख्यं महासुरम्।।४९।।

दुर्गा देवीति विख्यातं तन्मे नाम भविष्यति।
पुनश्चाहं यदा भीमं रूपं कृत्वा हिमाचले।।५०।।

रक्षांसि[१] भक्षयिष्यामि मुनीनां त्राणकारणात्।
तदा मां मुनयः सर्वे स्तोष्यन्त्यानम्रमूर्तयः।।५१।।

भीमा देवीति विख्यातं तन्मे नाम भविष्यति।
यदारुणाख्यस्त्रैलोक्ये महाबाधां करिष्यति।।५२।।

---

१. पा० – क्षययिष्यामि (क्षपयिष्यामि इति वा)।

तदाहं भ्रामरं रूपं कृत्वाऽसंख्येयषट्पदम्।
त्रैलोक्यस्य हितार्थाय वधिष्यामि महासुरम्।।५३।।

भ्रामरीति च मां लोकास्तदा स्तोष्यन्ति सर्वतः।
इत्थं यदा यदा बाधा दानवोत्था भविष्यति।।५४।।

तदा तदावतीर्याहं करिष्याम्यरिसंक्षयम्।।ॐ।।५५।।

इति श्रीमार्कण्डेयपुराणे सावर्णिके मन्वन्तरे देवीमाहात्म्ये देव्याः स्तुतिर्नामैकादशोऽध्यायः।।११।।

उवाच ४, अर्धश्लोकः १, श्लोकाः ५०,
एवम ५५, एवमादितः ६३०।।

द्वादशोऽध्यायः

देवी-चरित्रों के पाठका माहात्म्य

ध्यानम्

ॐ विद्युद्दामसमप्रभां मृगपतिस्कन्धस्थितां भीषणां
कन्याभिः करवालखेटविलसद्धस्ताभिरासेविताम्।
हस्तैश्चक्रगदासिखेटविशिखांश्चापं गुणं तर्जनीं
बिभ्राणामनलात्मिकां शशिधरां दुर्गां त्रिनेत्रां भजे।।

'ॐ' देव्युवाच।।१।।

एभिः स्तवैश्च मां नित्यं स्तोष्यते यः समाहितः।
तस्याहं सकलां बाधां नाश[1]यिष्याम्यसंशयम्।।२।।
मधुकैटभनाशं च महिषासुरघातनम्।
कीर्तयिष्यन्ति ये तद्वद् वधं शुम्भनिशुम्भयोः।।३।।
अष्टम्यां च चतुर्दश्यां नवम्यां चैकचेतसः।
श्रोष्यन्ति चैव ये भक्त्या मम माहात्म्यमुत्तमम्।।४।।
न तेषां दुष्कृतं किञ्चिद् दुष्कृतोत्था न चापदः।
भविष्यति न दारिद्र्यं न चैवेष्टवियोजनम्।।५।।

---

१. पा० — शम०।

शत्रुतो न भयं तस्य दस्युतो वा न राजतः।
न शस्त्रानलतोयौघात्कदाचित्सम्भविष्यति।।६।।

तस्मान्ममैतन्माहात्म्यं पठितव्यं समाहितैः।
श्रोतव्यं च सदा भक्त्या परं स्वस्त्ययनं हि तत्।।७।।

उपसर्गानशेषांस्तु महामारीसमुद्भवान्।
तथा त्रिविधमुत्पातं माहात्म्यं शमयेन्मम।।८।।

यत्रैतत्पठ्यते सम्यङ्नित्यमायतने मम।
सदा न तद्विमोक्ष्यामि सांनिध्यं तत्र मे स्थितम्।।९।।

बलिप्रदाने पूजायामग्निकार्यें महोत्सवे।
सर्वं ममैतच्चरितमुच्चार्यं श्राव्यमेव च।।१०।।

जानताऽजानता वापि बलिपूजां तथा कृताम्।
प्रतीच्छिष्याम्यहं[1] प्रीत्या वह्निहोमं तथा कृतम्।।११।।

शरत्काले महापूजा क्रियते या च वार्षिकी।
तस्यां ममैतन्माहात्म्यं श्रुत्वा भक्तिसमन्वितः।।१२।।

स[2]र्वाबाधाविनिर्मुक्तो धनधान्यसुतान्वितः।
मनुष्यो मत्प्रसादेन भविष्यति न संशयः।।१३।।

श्रुत्वा ममैतन्माहात्म्यं तथा चोत्पत्तयः शुभाः।
पराक्रमं च युद्धेषु जायते निर्भयः पुमान्।।१४।।

---

१. पा० – प्रतीक्षिष्यामि। २. पा० – सर्वबाधा।

रिपवः संक्षयं यान्ति कल्याणं चोपपद्यते।
नन्दते च कुलं पुंसां माहात्म्यं मम शृण्वताम्।।१५।।
शान्तिकर्मणि सर्वत्र तथा दुःस्वप्नदर्शने।
ग्रहपीडासु चोग्रासु माहात्म्यं शृणुयान्मम।।१६।।
उपसर्गाः शमं यान्ति ग्रहपीडाश्च दारुणाः।
दुःस्वप्नं च नृभिर्दृष्टं सुस्वप्नमुपजायते।।१७।।
बालग्रहाभिभूतानां बालानां शान्तिकारकम्।
संघातभेदे च नृणां मैत्रीकरणमुत्तमम्।।१८।।
दुर्वृत्तानामशेषाणां बलहानिकरं परम्।
रक्षोभूतपिशाचानां पठनादेव नाशनम्।।१९।।
सर्वं ममैतन्माहात्म्यं मम सन्निधिकारकम्।
पशुपुष्पार्घ्यधूपैश्च गन्धदीपैस्तथोत्तमैः।।२०।।
विप्राणां भोजनैर्होमैः प्रोक्षणीयैरहर्निशम्।
अन्यैश्च विविधैर्भोगैः प्रदानैर्वत्सरेण या।।२१।।
प्रीतिर्मे क्रियते सास्मिन् सकृत्सुचरिते श्रुते।
श्रुतं हरति पापानि तथाऽऽरोग्यं प्रयच्छति।।२२।।
रक्षां करोति भूतेभ्यो जन्मनां कीर्तनं मम।
युद्धेषु चरितं यन्मे दुष्टदैत्यनिबर्हणम्।।२३।।
तस्मिञ्छ्रुते वैरिकृतं भयं पुंसां न जायते।
युष्माभिः स्तुतयो याश्च याश्च ब्रह्मर्षिभिः कृताः।। २४।।

ब्रह्मणा च कृतास्तास्तु प्रयच्छन्ति शुभां मतिम्।
अरण्ये प्रान्तरे वापि दावाग्निपरिवारितः।।२५।।
दस्युभिर्वा वृतः शून्ये गृहीतो वापि शत्रुभिः।
सिंहव्याघ्रानुयातो वा वने वा वनहस्तिभिः।।२६।।
राज्ञा क्रुद्धेन चाज्ञप्तो वध्यो बन्धगतोऽपि वा।
आघूर्णितो वा वातेन स्थितः पोते महार्णवे।।२७।।
पतत्सु चापि शस्त्रेषु संग्रामे भृशदारुणे।
सर्वाबाधासु घोरासु वेदनाभ्यर्दितोऽपि वा।।२८।।
स्मरन्ममैतच्चरितं नरो मुच्येत संकटात्।
मम प्रभावात्सिंहाद्या दस्यवो वैरिणस्तथा।।२९।।
दूरादेव पलायन्ते स्मरतश्चरितं मम।।३०।।

ऋषिरुवाच।।३१।।

इत्युक्त्वा सा भगवती चण्डिका चण्डविक्रमा।।३२।।
पश्यतामेव[१] देवानां तत्रैवान्तरधीयत।
तेऽपि देवा निरातङ्काः स्वाधिकारान् यथा पुरा।।३३।।
यज्ञभागभुजः सर्वे चक्रुर्विनिहतारयः।
दैत्याश्च देव्या निहते शुम्भे देवरिपौ युधि।।३४।।
जगद्विध्वंसिनि तस्मिन् महोग्रेऽतुलविक्रमे।
निशुम्भे च महावीर्ये शेषाः पातालमाययुः।।३५।।

---

१. पा० — तां सर्वदेवा०

एवं भगवती देवी सा नित्यापि पुनः पुनः।
सम्भूय कुरुते भूप जगतः परिपालनम्।।३६।।

तयैतन्मोह्यते विश्वं सैव विश्वं प्रसूयते।
सा याचिता च विज्ञानं तुष्टा ऋद्धिं प्रयच्छति।।३७।।

व्याप्तं तयैतत्सकलं ब्रह्माण्डं मनुजेश्वर।
महाकाल्या महाकाले महामारीस्वरूपया।।३८।।

सैव काले महामारी सैव सृष्टिर्भवत्यजा।
स्थितिं करोति भूतानां सैव काले सनातनी।। ३९।।

भवकाले नृणां सैव लक्ष्मीर्वृद्धिप्रदा गृहे।
सैवाभावे तथाऽलक्ष्मीर्विनाशायोपजायते।।४०।।

स्तुता सम्पूजिता पुष्पैर्धूपगन्धादिभिस्तथा।
ददाति वित्तं पुत्रांश्च मतिं धर्मे गतिं[1] शुभाम्।।ॐ।। ४१।।

इति श्रीमार्कण्डेयपुराणे सावर्णिके मन्वन्तरे देवीमाहात्म्ये फलस्तुतिर्नाम द्वादशोऽध्यायः।।१२।।

उवाच २, अर्धश्लोकौ २, श्लोकाः३७,
एवम् ४१, एवमादितः ६७१।।

---

१. पा० – तथा।

त्रयोदशोऽध्यायः

सुरथ और वैश्यको देवी का वरदान

ध्यानम्

ॐ बालार्कमण्डलाभासां चतुर्बाहुं त्रिलोचनाम्।
पाशाङ्कुशवराभीतीर्धारयन्तीं शिवां भजे॥

'ॐ' ऋषिरुवाच॥१॥

एतत्ते कथितं भूप देवीमाहात्म्यमुत्तमम्।
एवंप्रभावा सा देवी ययेदं धार्यते जगत्॥२॥
विद्या तथैव क्रियते भगवद्विष्णुमायया।
तया त्वमेष वैश्यश्च तथैवान्ये विवेकिनः॥३॥
मोह्यन्ते मोहिताश्चैव मोहमेष्यन्ति चापरे।
तामुपैहि महाराज शरणं परमेश्वरीम्॥४॥
आराधिता सैव नृणां भोगस्वर्गापवर्गदा॥५॥

मार्कण्डेय उवाच॥६॥

इति तस्य वचः श्रुत्वा सुरथः स नराधिपः॥७॥
प्रणिपत्य महाभागं तमृषिं शंसितव्रतम्।
निर्विण्णोऽतिममत्वेन राज्यापहरणेन च॥८॥
जगाम सद्यस्तपसे स च वैश्यो महामुने।
संदर्शनार्थमम्बाया नदीपुलिनसंस्थितः॥९॥

स च वैश्यस्तपस्तेपे देवीसूक्तं परं जपन्।
तौ तस्मिन् पुलिने देव्याः कृत्वा मूर्तिं महीमयीम्।। १०।।
अर्हणां चक्रतुस्तस्याः पुष्पधूपाग्नितर्पणैः।
निराहारौ यताहारौ तन्मनस्कौ समाहितौ।। ११।।
ददतुस्तौ बलिं चैव निजगात्रासृगुक्षितम्।
एवं समाराधयतोस्त्रिभिर्वर्षैर्यतात्मनोः।।१२।।
परितुष्टा जगद्धात्री प्रत्यक्षं प्राह चण्डिका।।१३।।

देव्युवाच।।१४।।

यत्प्रार्थ्यते त्वया भूप त्वया च कुलनन्दन।
मत्तस्तत्प्राप्यतां सर्वं परितुष्टा ददामि तत्।।१५।।

मार्कण्डेय उवाच।।१६।।

ततो वव्रे नृपो राज्यमविभ्रंश्यन्यजन्मनि।
अत्रैव च निजं राज्यं हतशत्रुबलं बलात्।।१७।।
सोऽपि वैश्यस्ततो ज्ञानं वव्रे निर्विण्णमानसः।
ममेत्यहमिति प्राज्ञः सङ्गविच्युतिकारकम्।।१८।।

देव्युवाच।।१९।।

स्वल्पैरहोभिर्नृपते स्वं राज्यं प्राप्स्यते भवान्।।२०।।
हत्वा रिपूनस्खलितं तव तत्र भविष्यति।।२१।।
मृतश्च भूयः सम्प्राप्य जन्म देवाद्विवस्वतः।।२२।।
सावर्णिको नाम[१] मनुर्भवान् भुवि भविष्यति।।२३।।

---

१. पा० — मनुर्नाम।

वैश्यवर्य त्वया यश्च वरोऽस्मत्तोऽभिवाञ्छितः।।२४।।

तं प्रयच्छामि संसिद्ध्यै तव ज्ञानं भविष्यति।।२५।।

मार्कण्डेय उवाच।।२६।।

इति दत्त्वा तयोर्देवी यथाभिलषितं वरम्।।२७।।

बभूवान्तर्हिता सद्यो भक्त्या ताभ्यामभिष्टुता।
एवं देव्या वरं लब्ध्वा सुरथः क्षत्रियर्षभः।।२८।।

सूर्याज्जन्म समासाद्य सावर्णिर्भविता मनुः।।२९।।

एवं देव्या वरं लब्ध्वा सुरथः क्षत्रियर्षभः।
सूर्याज्जन्म समासाद्य सावर्णिर्भविता मनुः।।क्लीं ॐ।।

इति श्रीमार्कण्डेयपुराणे सावर्णिके मन्वन्तरे देवीमाहात्म्ये
सुरथ-वैश्ययोर्वरप्रदानं नाम त्रयोदशोऽध्यायः।।१३।।

उवाच ६, अर्द्धश्लोकाः ११, श्लोकाः १२, एवम् २९,
एवमादितः ७००।।

समस्ता उवाचमन्त्राः ५७, अर्द्धश्लोकाः ४२, श्लोकाः
५३५, अवदानानि।।६६।।

सरस्वतीसूक्तम्
(ऋग्वेद संहिता)

ॐ इयमददाद् रभसमृणच्युतं दिवोदासं वध्र्यश्वाय दाशुषे। या शश्वन्तमाचखदावसं पणिं ता ते दात्राणि तविषा सरस्वती।।१।। इयं शुष्मेभिर्बिसखा इवारुजत् सानु गिरीणां तविषेभिरूर्मिभिः। पारावतघ्नीमवसे सुवृक्तिभिः सरस्वतीमा विवासेम धीतिभिः।।२।। सरस्वति देवनिदो नि बर्हय प्रजां विश्वस्य बृसयस्य मायिनः। उत क्षितिभ्योऽवनीरविन्दो विषमेभ्यो अस्रवो वाजिनीवति।।३।। प्रणो देवी सरस्वती वाजेभिर्वाजिनीवती। धीनामवित्र्यवतु।।४।।

यस्त्वा देवि सरस्वत्युपब्रूते धनेहिते। इन्द्रं न वृत्रातूर्ये।।५।। त्वं देवि सरस्वत्यवा वाजेषु वाजिनि। रदापूषेव नः सनिम्।।६।। उत स्या नः सरस्वती घोरा हिरण्यवर्तनिः। वृत्रघ्नी वष्टि सुष्टुतिम्।।७।। यस्या अनन्तो अह्रुतस्त्वेषश्चरिष्णुरर्णवः। अमश्चरति रोरुवत्।।८।।

सा नो विश्वा अति द्विषः स्वसॄरन्या ऋतावरी। अतन्नहेव सूर्यः।।९।। उत नः प्रिया प्रियासु सप्तस्वसा सुजुष्टा। सरस्वती स्तोम्या भूत्।।१०।। आपप्रुषी पार्थिवान्युरु रजो अन्तरिक्षम्। सरस्वती निदस्पातु।।११।।

त्रिषधस्था सप्तधातुः पञ्च जाता वर्धयन्ती। वाजेवाजे हव्या भूत्।।१२।।

प्र या महिम्ना महिनासु चेकिते द्युम्नेभिरन्या अपसामपस्तमा। रथ इव बृहती विभ्वने कृतोपस्तुत्या चिकितुषा सरस्वती।।१३।। सरस्वत्यभि नो नेषि वस्यो माप स्फरीः पयसा मा न आ धक्। जुषस्व नः सख्या वेश्या च मा त्वत् क्षेत्राण्यरणानि गन्म।।१४।। प्र क्षोदसा धायसा सस्र एषा सरस्वती धरुणमायसी पूः। प्रबाबधाना रथ्येव याति विश्वा अपो महिना सिन्धुरन्याः।।१५।। एकाचेतत् सरस्वती नदीनां शुचिर्यती गिरिभ्य आ समुद्रात्। रायश्चेतन्ती भुवनस्य भूरेर्घृतं पयो दुदुहे नाहुषाय।।१६।।

स वावृधे नर्यो योषणासु वृषा शिशुर्वृषभो यज्ञियासु। स वाजिनं मघवद्भ्यो दधाति वि सातये तन्वं मामृजीत।।१७।। उत स्या नः सरस्वती जुषाणोप श्रवत् सुभगा यज्ञे अस्मिन्। मितज्ञुभिर्नमस्यैरियाना राया युजा चिदुत्तरा सखिभ्यः।।१८।। इमा जुह्वाना युष्मदा नमोभिः प्रति स्तोमं सरस्वति जुषस्व। तव शर्मन् प्रियतमे दधाना उप स्थेयाम शरणं न वृक्षम्।।१९।। अयमु ते सरस्वति वसिष्ठो द्वारावृतस्य सुभगे व्यावः। वर्ध शुभ्रे स्तुवते रासि वाजान् यूयं पात स्वस्तिभिः सदा नः।।२०।।

बृहदु गायिषे वचो ऽसुर्या नदीनाम्। सरस्वतीमिन्महया सुवृक्तिभिः स्तोमैर्वसिष्ठ रोदसी।।२१।। उभे यत् ते महिना शुभ्रे अन्धसी अधिक्षियन्ति पूरवः। सा नो बोध्यवित्री मरुत्सखा चोद राधो मघोनाम्।।२२।। भद्रमिद् भद्रा कृणवत् सरस्वत्यकवारी चेतति वाजिनीवती। गृणाना जमदग्निवत् स्तुवाना च वसिष्ठवत्।।२३।। जनीयन्तो न्वग्रवः पुत्रीयन्तः सुदानवः। सरस्वन्तं हवामहे।।२४।।

ये ते सरस्व ऊर्मयो मधुमन्तो घृतश्चुतः। तेभिर्नोऽविता भव।।२५।। पीपिवांसं सरस्वतः स्तनं यो विश्वदर्शतः। भक्षीमहि प्रजामिषम्।।२६।। अम्बितमे नदीतमे देवितमे सरस्वति। अप्रशस्ता इव स्मसि प्रशस्तिमम्ब नस्कृधि।।२७।। त्वे विश्वा सरस्वती श्रितायूंषि देव्याम्। शुनहोत्रेषु प्रजां देवि दिदिड्ढि नः।।२८।।

इमा ब्रह्म सरस्वति जुषस्व वाजिनीवति। या ते मन्म गृत्समदा ऋतावरि प्रिया देवेषु जुह्वति।।२९।। पावका नः सरस्वती वाजेभिर्वाजिनीवती। यज्ञं वष्टु धियावसुः।।३०।। चोदयित्री सुनृतानां चेतन्ती सुमतीनाम् यज्ञं दधे सरस्वती।।३१।। महो अर्णः सरस्वती प्र चेतयति केतुना। धियो विश्वा वि राजति।।३२।।

सरस्वती देवयन्तो हवन्ते सरस्वतीमध्वरे तायमाने। सरस्वतीं सुकृतो अह्वयन्त सरस्वती दाशुषे

वार्यं दात्।।३३।। सरस्वति या सरथं ययाथ स्वधाभिर्देवि पितृभिर्मदन्ती। आसद्यास्मिन् बर्हिषि मादयस्वानमीवा इष आ धेह्यस्मे।।३४।। सरस्वतीं यां पितरो हवन्ते दक्षिणा यज्ञमभिनक्षमाणाः। सहस्त्रार्घमिलो अत्र भागं रायस्पोषं यजमानेषु धेहि।।३४।। आ नो दिवो बृहतः पर्वतादा सरस्वती यजता गन्तु यज्ञम्। हवं देवी जुजुषाणा घृताची शग्मां नो वाचमुशती शृणोतु।।३६।।

राकामहं सुहवां सुष्टुती हुवे शृणोतु नः सुभगा बोधतु त्मना। सीव्यत्वपः सूच्याच्छिद्यमानया ददातु वीरं शतदायमुक्थ्यम्।।३७।। यास्ते राके सुमतयः सुपेशसो याभिर्ददासि दाशुषे वसूनि। ताभिर्नो अद्य सुमना उपागहि सहस्त्रपोषं सुभगे रराणा।।३८।। सिनीवालि पृथुष्टुके या देवानामसि स्वसा। जुषस्व हव्यमाहुतं प्रजां देवि दिदिड्ढि नः।।३९।। या सुबाहुः स्वङ्गुरिः सुषूमा बहुसूवरी। तस्यै विश्पत्न्यै हविः सिनीवाल्यै जुहोतन।।४०।। या गुङ्गूर्या सिनीवाली या राका या सरस्वती। इन्द्राणीमह्व ऊतये वरुणानीं स्वस्तये।।४१।।

ॐ शान्तिः शान्तिः शान्तिः।।

शुक्लां ब्रह्मविचार सार परमामाद्यां जगद् व्यापिनीम्।
वीणापुस्तकधारिणीमभयदां जाड्यान्धकारापहाम्।
हस्ते स्फाटिक मालिकां विदधतीं पद्मासने संस्थिताम्।
बन्दे तां परमेश्वरीं भगवतीं बुद्धिप्रदां शारदाम्।

अथ देव्यपराधक्षमापनस्तोत्रम्

न मन्त्रं नो यन्त्रं तदपि च न जाने स्तुतिमहो
न चाह्वानं ध्यानं तदपि च न जाने स्तुति कथा।
न जाने मुद्रास्ते तदपि च न जाने विलपनम्
परं जाने मातस्त्वदनुसरणं क्लेशहरणम्।।१।।

विधेरज्ञानने द्रविणविरहेणालसतया
विधेयाशक्यत्वात्तव चरणयोर्या च्युतिरभूत्।
तदेतत्क्षन्तव्यं जननि सकलोद्धारिणि शिवे
कुपुत्रो जायेत क्वचिदपि कुमाता न भवति।।२।।

पृथिव्यां पुत्रास्ते जननि बहवः सन्ति सरलाः
परं तेषां मध्ये विरलतरलोऽहं तव सुतः।
मदीयोऽयं त्यागः समुचितमिदं नो तव शिवे
कुपुत्रो जायेत क्वचिदपि कुमाता न भवति।।३।।

जगन्मातर्मातस्तव चरणसेवा न रचिता
न वा दत्तं देवि द्रविणमपि भूयस्तव मया।
तथापि त्वं स्नेहं मयि निरुपमं यत्प्रकुरुषे
कुपुत्रो जायेत क्वचिदपि कुमाता न भवति।।४।।

परित्यक्ता देवा विविधविधसेवाकुलतया
मया पञ्चाशीतेरधिकमपनीते तु वयसि।
इदानीं चेन्मातस्तव यदि कृपा नापि भविता
निरालम्बो लम्बोदरजननि कं यामि शरणम्।।५।।

श्वपाको जल्पाको भवति मधुपाकोपमगिरा
निरातंङ्को रंको विहरति चिरं कोटिकनकैः।
तवापर्णे कर्णे विशति मनुवर्णे फलमिदं
जनः को जानीते जननि जपनीयं जपविधौ।।६।।

चिताभस्मालेपो गरलमशनं दिक्पटधरो
जटाधारी कण्ठे भुजगपतिहारी पशुपतिः।
कपाली भूतेशो भजति जगदीशैकपदवीं
भवानी त्वत्पाणिग्रहणपरिपाटीफलमिदम्।।७।।

न मोक्षस्याकांक्षा भवविभववांछापि च न मे
न विज्ञानपेक्षा शशिमुखि सुखेच्छापि न पुनः।
अतस्त्वां संयाचे जननि जननं यातु मम वै
मृडानी रुद्राणी शिव शिव भवानीति जपतः।।८।।

नाराधितासि विधिना विविधोपचारैः
किं रुक्षचिन्तनपरैर्न कृतं वचोभिः।
श्यामे त्वमेव यदि किंचन मय्यनाथे
धत्से कृपामुचितमम्ब परं तवैव।।९।।

आपत्सु मग्नः स्मरणं त्वदीयं,
करोमि दुर्गे करुणार्णवेशि।
नैतच्छठत्वं मम भावयेथाः
क्षुधातृषार्ता जननीं स्मरन्ति।।१०।।

जगदम्ब विचित्रमत्र किं,
परिपूर्णा करुणास्ति चेन्मयि।
अपराधपरम्परापरं,
न हि माता समुपेक्षते सुतम्।।११।।

मत्समः पातकी नास्ति पापघ्नी त्वत्समा न हि।
एवं ज्ञात्वा महादेवि यथायोग्यं तथा कुरु।।१२।।

इति श्रीशङ्कराचार्यविरचितं देव्यपराधक्षमापनस्तोत्रं सम्पूर्णम्।

अथ देव्यपराधक्षमापनस्तोत्रम्
(अनुवाद)

माँ! मैं न मन्त्र जानता हूँ, न यन्त्र; अहो! मुझे स्तुति का भी ज्ञान नहीं है। न आवाहन का पता है न ध्यान का। स्तोत्र और कथा की भी जानकारी नहीं है। न तो तुम्हारी मुद्राएँ जानता हूँ और न मुझे व्याकुल होकर विलाप करना ही आता है; परन्तु एक बात जानता हूँ, केवल तुम्हारा अनुसरण – तुम्हारे पीछे चलना। जो कि सब क्लेशों को – समस्त दुःख विपत्तियों को हर लेने वाला है।।१।।

सबका उद्धार करने वाली कल्याणमयी माता! मैं पूजा की विधि नहीं जानता, मेरे पास धन का भी अभाव है, मैं स्वभाव से भी आलसी हूँ तथा मुझ से ठीक-ठीक पूजा का संपादन हो भी नहीं सकता; इन सब कारणों से तुम्हारे चरणों की सेवा में जो त्रुटि हो गयी है, उसे क्षमा करना क्योंकि कुपुत्र का होना संभव है, किन्तु कहीं भी कुमाता नहीं होती।।२।।

माँ! इस पृथ्वी पर तुम्हारे सीधे-सादे पुत्र तो बहुत-से हैं, किन्तु उन सब में मैं ही अत्यन्त चपल तुम्हारा बालक हूँ! मेरे जैसा चंचल कोई बिरला ही होगा। शिवे! मेरा

जो यह त्याग हुआ है, यह तुम्हारे लिये कदापि उचित नहीं है। क्योंकि संसार में कुपुत्र का होना सम्भव है, किन्तु कहीं भी कुमाता नहीं होती।।३।।

जगदम्ब! मात! मैंने तुम्हारे चरणों की सेवा कभी नहीं की, देवि! तुम्हें अधिक धन भी समर्पित नहीं किया; तथापि मुझ जैसे अधम पर जो तुम अनुपम स्नेह करती हो इसका कारण यही है कि संसार में कुपुत्र पैदा हो सकता है! किन्तु कहीं भी कुमाता नहीं होती।।४।।

गणेश जी को जन्म देने वाली माता पार्वती। (अन्य देवताओं की आराधना करते समय) मुझे नाना प्रकार की सेवाओं में व्यग्र रहना पड़ता था, इसलिये पचासी वर्ष से अधिक अवस्था बीत जाने पर मैंने देवताओं को छोड़ दिया है, अब उनकी सेवा-पूजा मुझ से नहीं हो पाती। अतएव उनसे कुछ भी सहायता मिलने की आशा नहीं है। इस समय यदि तुम्हारी कृपा नहीं होगी तो मैं अवलम्बरहित होकर किसकी शरण में जाऊँगा?।।५।।

माता अपर्णा! तुम्हारे मन्त्र का एक अक्षर भी कान में पढ़ जाये तो उसका फल यह होता है कि मूर्ख चाण्डाल भी मधु पाक के समान मधुर वाणी का उच्चारण करने

वाला उत्तम वक्ता हो जाता है, दीन मनुष्य भी करोड़ो स्वर्णमुद्राओं से सम्पन्न हो चिरकाल निर्भय विहार करता रहता है। जब मन्त्र के एक अक्षर के श्रवण का ऐसा फल है तो जो लोग विधिपूर्वक जप में लगे रहते है उनके जप से प्राप्त होने वाला उत्तम फल कैसा होगा, इसको कौन मनुष्य जान सकता है?।।६।।

भवानी! जो अपने अंगों में चिता की राख–भभूत लपेटे रहते हैं, जिनका विष ही भोजन है, जो दिगम्बर (नग्न रहने वाले) हैं, मस्तक पर जटा और कण्ठ में नागराज वासु की को हार के रूप में धारण करते है तथा जिनके हाथ में कपाल (भिक्षापात्र) शोभा पाता है, ऐसे भूतनाथ पशुपति भी जो एकमात्र 'जगदीश' की पदवी धारण करते है, इसका क्या कारण है? यह महत्व उन्हें कैसे मिला; यह केवल तुम्हारे पाणिग्रहण की परिपाटी का फल है; तुम्हारे साथ विवाह होने से ही उनका महत्त्व बढ़ गया।।७।।

मुख में चन्द्रमा की शोभा धारण करने वाली माँ! मुझे मोक्ष की इच्छा नहीं है, संसार के वैभव की अभिलाषा नहीं है; न विज्ञान की अपेक्षा है, न सुख की आकांक्षा; अतः तुमसे मेरी यही याचना है कि मेरा जन्म 'मृडानी, रुद्राणी, शिव भवानी इन नामों का जप करते हुए बीते।।८।।

माँ श्यामा! नाना प्रकार की पूजन-सामग्रीयों से कभी विधिपूर्षक तुम्हारी आराधना मुझ से न हो सकी। सदा कठोर भाव का चिन्तन करने वाली मेरी वाणी ने कौन-सा अपराध नहीं किया है! फिर भी तुम स्वयं ही प्रयत्न करके मुझ अनाथ पर जो किञ्चित् कृपा दृष्टि रखती हो, माँ! यह तुम्हारे ही योग्य है! तुम्हारी-जैसी दयामती माता ही मेरे जैसे कुपुत्र को भी आश्रय दे सकती है।।९।।

माता दुर्गे! करुणासिन्धु महेश्वरी! मैं विपत्तियों में फँसकर आज जो तुम्हारा स्मरण करता हूँ (पहले कभी नहीं करता रहा) इसे मेरी शठता न मान लेना! क्योंकि भूख प्यास से पीड़ित बालक माता का ही स्मरण करते हैं।।१०।।

जगदम्ब! मुझ पर जो तुम्हारी पूर्ण कृपा बनी हुई है, इसमें आश्चर्य की कौन-सी बात है, पुत्र अपराध-पर-अपराध क्यों न करता हो, फिर भी माता उसकी उपेक्षा नहीं करती।।११।।

महादेवि! मेरे समान कोई पातकी नहीं है और तुम्हारे समान दूसरी कोई पापहारिणी नहीं है; ऐसा जानकर जो उचित जान पड़े, वह करो।।१२।।

क्षमा-प्रार्थना

अपराधसहस्त्राणि क्रियन्तेऽहर्निशं मया।
दासोऽयमिति मां मत्वा क्षमस्व परमेश्वरि।।१।।

आवाहनं न जानामि न जानामि विसर्जनम्।
पूजां चैव न जानामि क्षम्यतां परमेश्वरि।।२।।

मन्त्रहीनं क्रियाहीनं भक्तिहीनं सुरेश्वरि।
यत्पूजितं मया देवि परिपूर्णं तदस्तु मे।।३।।

अपराधशतं कृत्वा जगदम्बेति चोच्चरेत्।
यां गतिं समवाप्नोति न तां ब्रह्मादयः सुराः।।४।।

सापराधोऽस्मि शरणं प्राप्तस्त्वां जगदम्बिके।
इदानीमनुकम्प्योऽहं यथेच्छसि तथा कुरु।।५।।

अज्ञानाद्विस्मृतेर्भ्रान्त्या यन्न्यूनमधिकं कृतम्।
तत्सर्वं क्षम्यतां देवि प्रसीद परमेश्वरि।।६।।

कामेश्वरि जगन्मातः सच्चिदानन्दविग्रहे।
गृहाणार्चामिमां प्रीत्या प्रसीद परमेश्वरि।।७।।

गुह्यातिगुह्यगोप्त्री त्वं गृहाणास्मत्कृतं जपम्।
सिद्धिर्भवतु मे देवि त्वत्प्रसादात्सुरेश्वरि।।८।।

।।श्रीदुर्गार्पणमस्तु।।

परमेश्वरि! मेरे द्वारा रात - दिन सहस्रों अपराध होते रहते है। 'यह मेरा दास है' यूँ समझ कर मेरे उन अपराधों को तुम कृपापूर्वक क्षमा करो।।१।।

परमेश्वरि! मैं आवाहन नहीं जानता, विसर्जन करना नहीं जानता तथा पूजा करने का ढंग भी नहीं जानता, क्षमा करो।।२।।

देवि! सुरेश्वरि! मैंने जो मन्त्रहीन, क्रियाहीन और भक्तिहीन पूजन किया है, वह सब आपकी कृपा से पूर्ण हो।।३।।

सैंकड़ो अपराध करके भी जो तुम्हारी शरण में जा 'जगदम्ब' कहकर पुकारता है, उसे वही गति प्राप्त होती है, जो ब्रह्मादि देवताओं के लिये भी सुलभ नहीं है।।४।।

जगदम्बिके! मैं अपराधी हूँ, किन्तु तुम्हारी शरण में आया हूँ। इस समय दया का पात्र हूँ। तु जैसा चाहो, करो।।५।।

देवि! परमेश्वरि! अज्ञान से, भूल से अथवा बुद्धि भ्रान्त होने के कारण मैंने जो न्यूनता या अधिकता कर दी हो वह सब क्षमा करो और प्रसन्न होओ।।६।।

सच्चिदानन्दस्वरूपा परमेश्वरि! जगन्माता कामेश्वरि! तुम प्रेमपूर्वक मेरी यह पूजा स्वीकार करो और मुझ पर प्रसन्न रहो।।७।।

देवि! सुरेश्वरि! तुम गोपनीय से भी गोपनीय वस्तु की रक्षा करने वाली हो। मेरे निवेदन किये हुए इस जप को ग्रहण करो। तुम्हारी कृपा से मुझे सिद्धि प्राप्त हो।।८।।

त्वमेव माता च पिता त्वमेव, त्वमेव बन्धुश्च सखा त्वमेव।
त्वमेव विद्या द्रविणं त्वमेव, त्वमेव सर्वं मम देव देव।।

सिद्धकुञ्जिकास्तोत्रम्

शिव उवाच

शृणु देवि प्रवक्ष्यामि कुञ्जिकास्तोत्रमुत्तमम्।
येन मन्त्रप्रभावेण चण्डीजापः शुभो भवेत्।।१।।

न कवचं नार्गलास्तोत्रं कीलकं न रहस्यकम्।
न सूक्तं नापि ध्यानं च न न्यासो न च वार्चनम्।।२।।

कुञ्जिकापाठमात्रेण दुर्गापाठफलं लभेत्।
अति गुह्यतरं देवि देवानामपि दुर्लभम्।।३।।

गोपनीयं प्रयत्नेन स्वयोनिरिव पार्वति।
मारणं मोहनं वश्यं स्तम्भनोच्चाटनादिकम्।
पाठमात्रेण संसिद्ध्येत् कुञ्जिकास्तोत्रमुत्तमम्।।४।।

अथ मन्त्रः

ॐ ऐं ह्रीं क्लीं चामुण्डायै विच्चे।। ॐ ग्लौं हुं क्लीं जूं
सः ज्वालय ज्वालय ज्वल ज्वल प्रज्वल प्रज्वल
ऐं ह्रीं क्लीं चामुण्डायै विच्चे ज्वल हं सं लं क्षं फट् स्वाहा

।।इति मन्त्रः।।

नमस्ते रुद्ररूपिण्यै नमस्ते मधुमर्दिनि।
नमः कैटभहारिण्यै नमस्ते महिषार्दिनि।।१।।

नमस्ते शुम्भहन्त्र्यै च निशुम्भासुरघातिनि।।२।।

जाग्रतं हि महादेवि जपं सिद्धं कुरुष्व मे।
ऐंकारी सृष्टिरूपायै ह्रींकारी प्रतिपालिका।।३।।

क्लींकारी कामरूपिण्यै बीजरूपे नमोऽस्तु ते।
चामुण्डा चण्डघाती च यैकारी वरदायिनी।।४।।

विच्चे चाभयदा नित्यं नमस्ते मन्त्ररूपिणि।।५।।

धां धीं धूं धूर्जटेः पत्नी वां वीं वूं वागधीश्वरी।
क्रां क्रीं क्रूं कालिका देवि शां शीं शूं मे शुभं कुरु।।६।।

हुं हुं हुंकाररूपिण्यै जं जं जं जम्भनादिनी।
भ्रां भ्रीं भ्रूं भैरवी भद्रे भवान्यै ते नमो नमः।।७।।

अं कं चं टं तं पं यं शं वीं दुं ऐं वीं हं क्षं।
धिजाग्रं धिजाग्रं त्रोटय त्रोटय दीप्तं कुरु कुरु स्वाहा।।
पां पीं पूं पार्वती पूर्णा खां खीं खूं खेचरी तथा।।८।।

सां सीं सूं सप्तशती देव्या मन्त्रसिद्धिं कुरुष्व मे।।
इदं तु कुञ्जिकास्तोत्रं मन्त्रजागर्तिहेतवे।
अभक्ते नैव दातव्यं गोपितं रक्ष पार्वति।।
यस्तु कुञ्जिकया देवि हीनां सप्तशतीं पठेत्।
न तस्य जायते सिद्धिररण्ये रोदनं यथा।

इति श्रीरुद्रयामले गौरीतन्त्रे शिवपार्वतीसंवादे
कुञ्जिकास्तोत्रं सम्पूर्णम्।
।।ॐ तत्सत्।।

सप्तशती के कुछ सिद्ध सम्पुट-मन्त्र

श्रीमार्कण्डेयपुराणान्तर्गत देवीमाहात्म्यमें 'श्लोक' ओर 'उवाच' आदि मिलाकर ७०० मन्त्र हैं। यह माहात्म्य दुर्गासप्तशतीके नामसे प्रसिद्ध है। सप्तशती अर्थ, धर्म, काम, मोक्ष – चारों पुरुषार्थोंको प्रदान करने वाली है। जो पुरुष जिस भाव और जिस कामनासे श्रद्धा एवं विधिके साथ सप्तशतीका पारायण करता है, उसे उसी भावना और कामनाके अनुसार निश्चय ही फल-सिद्धि होती है। इस बातका अनुभव अगणित पुरुषों का प्रत्यक्ष हो चुका है। यहाँ हम कूछ ऐसे चुने हुए मन्त्रों का उल्लेख करते हैं, जिनका सम्पुट देकर विधिवत् पारायण करने से विभिन्न पुरुषार्थों की व्यक्तिगत और सामूहिक रूप से सिद्धि होती है। इनमें अधिकांश सप्तशतीके ही मन्त्र हैं और कुछ बाहर के भी हैं –

(१) सामूहिक कल्याण के लिए

देव्या यया ततमिदं जगदात्मशक्त्या
निश्शेषदेवगणशक्तिसमूहमूर्त्या ।
तामम्बिकामखिलदेवमहर्षिपूज्यां
भक्त्या नताः स्म विदधातु शुभानि सा नः।।

(२) विश्वके अशुभ तथा भयका विनाश करने के लिए

यस्याः प्रभावमतुलं भगवाननन्तो
ब्रह्मा हरश्च न हि वक्तुमलं बलं च।
सा चण्डिकाखिलजगत्परिपालनाय
नाशाय चाशुभभयस्य मतिं करोतु।।

(३) विश्वकी रक्षाके लिये

या श्रीः स्वयं सुकृतिनां भवनेष्वलक्ष्मीः
पापात्मनां कृतधियां हृदयेषु बुद्धिः।
श्रद्धा सतां कुलजनप्रभवस्य लज्जा
तां त्वां नताः स्म परिपालय देवि विश्वम्।।

(४) विश्वके अभ्युदयके लिये

विश्वेश्वरि त्वं परिपासि विश्वं
विश्वात्मिका धारयसीति विश्वम्।
विश्वेशवन्द्या भवती भवन्ति
विश्वाश्रया ये त्वयि भक्तिनम्राः।।

(५) विश्वव्यापी विपत्तियोंके नाश के लिये

देवि प्रपन्नार्तिहरे प्रसीद
प्रसीद मातर्जगतोऽखिलस्य।

प्रसीद विश्वेश्वरि पाहि विश्वं
त्वमीश्वरी देवि चराचरस्य।।

(६) विश्वके पाप-ताप-निवारण के लिये

देवि प्रसीद परिपालय नोऽरिभीते-
र्नित्यं यथासुरवधादधुनैव सद्यः।
पापानि सर्वजगतां प्रशमं नयाशु
उत्पातपाकजनितांश्च महोपसर्गान्।।

(७) विपत्ति-नाश के लिये

शरणागतदीनार्तपरित्राणपरायणे ।
सर्वस्यार्तिहरे देवि नारायणि नमोऽस्तु ते।।

(८) विपत्तिनाश और शुभकी प्राप्ति के लिये

करोतु सा नः शुभहेतुरीश्वरी
शुभानि भद्राण्यभिहन्तु चापदः।

(९) भय-नाश के लिये

(क) सर्वस्वरूपे सर्वेशे सर्वशक्तिसमन्विते।
भयेभ्यस्त्राहि नो देवि दुर्गे देवि नमोऽस्तु ते।।

(ख) एतत्ते वदनं सौम्यं लोचनत्रयभूषितम्।
पातु नः सर्वभीतिभ्यः कात्यायनि नमोऽस्तु ते।।

(ग) ज्वालाकरालमत्युग्रमशेषासुरसूदनम् ।
त्रिशूलं पातु नो भीतेर्भद्रकालि नमोऽस्तु ते।।

(१०) पाप-नाश के लिये

हिनस्ति दैत्यतेजांसि स्वनेनापूर्य या जगत्।
सा घण्टा पातु नो देवि पापेभ्योऽनः सुतानिव।।

(११) रोग-नाश केलिये

रोगानशेषानपहंसि तुष्टा
रुष्टा तु कामान् सकलानभीष्टान्।
त्वामाश्रितानां न विपन्नराणां
त्वामाश्रिता ह्याश्रयतां प्रयान्ति।।

(१२) महामारी-नाशके लिये

जयन्ती मङ्गला काली भद्रकाली कपालिनी।
दुर्गा क्षमा शिवा धात्री स्वाहा स्वधा नमोऽस्तु ते।।

(१३) आरोग्य और सौभाग्यकी प्राप्ति के लिये

देहि सौभाग्यमारोग्यं देहि मे परमं सुखम्।
रूपं देहि जयं देहि यशो देहि द्विषो जहि।।

(१४) सुलक्षणा पत्नी की प्राप्ति के लिये

पत्नीं मनोरमां देहि मनोवृत्तानुसारिणीम्।
तारिणीं दुर्गसंसारसागरस्य कुलोद्भवाम्।।

(१५) बाधा-शान्ति के लिये

सर्वाबाधाप्रशमनं त्रैलोक्यस्याखिलेश्वरि।
एवमेव त्वया कार्यमस्मद्वैरिविनाशनम्।।

(१६) सर्वविध अभ्युदय के लिये

ते सम्मता जनपदेषु धनानि तेषां
तेषां यशांसि न च सीदति धर्मवर्गः।
धन्यास्त एव निभृतात्मजभृत्यदारा
येषां सदाभ्युदयदा भवती प्रसन्ना।।

(१७) दारिद्र्यदुःखादिनाश के लिये

दुर्गे स्मृता हरसि भीतिमशेषजन्तोः
स्वस्थैः स्मृता मतिमतीव शुभां ददासि।
दारिद्र्यदुःखभयहारिणि का त्वदन्या
सर्वोपकारकरणाय सदाऽऽर्द्रचित्ता।।

(१८) रक्षा पाने के लिये

शूलेन पाहि नो देवि पाहि खड्गेन चाम्बिके।
घण्टास्वनेन नः पाहि चापज्यानिः स्वनेन च।।

(१९) समस्त विद्याओं की और समस्त स्त्रियों में मातृभावकी प्राप्ति के लिये

विद्याः समस्तास्तव देवि भेदाः
स्त्रियः समस्ताः सकला जगत्सु।
त्वयैकया पूरितमम्बयैतत्
का ते स्तुतिः स्तव्यपरा परोक्तिः।।

(२०) सब प्रकार के कल्याण के लिये

सर्वमङ्गलमङ्गल्ये शिवे सर्वार्थसाधिके।
शरण्ये त्र्यम्बके गौरि नारायणि नमोऽस्तु ते।।

(२१) शक्ति-प्राप्ति के लिये

सृष्टिस्थितिविनाशानां शक्तिभूते सनातनि।
गुणाश्रये गुणमये नारायणि नमोऽस्तु ते।।

(२२) प्रसन्नता की प्राप्ति के लिये

प्रणतानां प्रसीद त्वं देवि विश्वार्तिहारिणि।
त्रैलोक्यवासिनामीड्ये लोकानां वरदा भव।।

(२३) विविध उपद्रवों से बचने के लिये

रक्षांसि यत्रोग्रहवषाश्च नागा
यत्रारयो दस्युबलानि यत्र।
दावानलो यत्र तथाब्धिमध्ये
तत्र स्थिता त्वं परिपासि विश्वम्।।

(२४) बाधामुक्त होकर धन-पुत्रादि की प्राप्ति के लिये

सर्वाबाधाविनिर्मुक्तो धनधान्यसुतान्वितः।
मनुष्यो मत्प्रसादेन भविष्यति न संशयः।।

(२५) भुक्ति-मुक्तिकी प्राप्ति के लिये

विधेहि देवि कल्याणं विधेहि परमां श्रियम्।
रूपं देहि जयं देहि यशो देहि द्विषो जहि।।

(२६) पापनाश तथा भक्ति की प्राप्ति के लिये

नतेभ्यः सर्वदा भक्त्या चण्डिके दुरितापहे।
रूपं देहि जयं देहि यशो देहि द्विषो जहि।।

(२७) स्वर्ग और मोक्षकी प्राप्ति के लिये

सर्वभूता यदा देवी स्वर्गमुक्तिप्रदायिनी।
त्वं स्तुता स्तुतये का वा भवन्तु परमोक्तयः।।

(२८) स्वर्ग और मुक्ति के लिये

सर्वस्य बुद्धिरूपेण जनस्य हृदि संस्थिते।
स्वर्गापवर्गदे देवि नारायणि नमोऽस्तु ते।।

(२९) मोक्षकी प्राप्ति के लिये

त्वं वैष्णवी शक्तिरनन्तवीर्या
विश्वस्य बीजं परमासि माया।
सम्मोहितं देवि समस्तमेतत्
त्वं वै प्रसन्ना भुवि मुक्तिहेतुः।।

(३०) स्वप्नमें सिद्धि-असिद्धि जानने के लिये

दुर्गे देवि नमस्तुभ्यं सर्वकामार्थसाधिके।
मम सिद्धिमसिद्धिं वा स्वप्ने सर्वं प्रदर्शय।।

****

अथ दुर्गा चालीसा

नमो नमो दुर्गे सुख करनी।
नमो नमो अम्बे दुःख हरनी।।

निरंकार है ज्योति तुम्हारी।
तिहूँ लोक फैली उजियारी।।

शीश ललाट मुख महा विशाला।
नेत्र लाल भृकुटी विकराला।।

रूप मातु को अधिक सुहावे।
दरश करत जन अति सुख पावे।।

तुम संसार शक्ति लय कीना।
पालन हेतु अन्न धन दीना।।

अन्न पूरणा हुई जग पाला।
तुम ही आदि सुन्दरी बाला।।

प्रलय काल सब नाशन हारी।
तुम गौरी शिव शंकर प्यारि।।

शिव योगी तुम्हारे गुण गावें।
ब्रह्मा विष्णु तुम्हें नित ध्यावें।।

रूप सरस्वती को तुम धारा।
दे सुबुद्धि ऋषि मुनिन उबारा।।

धर्यो रूप नरसिंह को अम्बा।
प्रगट भई फाड कर खम्बा।।

रक्षा करि प्रह्लाद बचायो।
हिरण्याक्ष को स्वर्ग पठायो।।

लक्ष्मी रूप धरो जग ·माहीं।
श्री नारायण अङ्ग समाहीं।

क्षीरसिन्धु में करत विलासा।
दया सिन्धु दीजे मन आसा।।

हिंगलाज में तुम्हीं भवानी।
महिमा अमित न जात बखानी।।

मातँगी अरु धूमावती माता।
भुवनेश्वरी बगला सुखदाता।।

श्री भैरव तारा जग तारिणि।
छिन्न भाल भवदुःख निवारिणि।।

केहरी वाहन सोहे भवानी।
लांगुर बीर चलत अगवानी।।

कर में खप्पर खड्ग बिराजे।
जाको देख काल डर भाजे।।

सोहै अस्त्र और त्रिशूला।
जाते उठत शत्रु हिय शूला।।

नगरकोट में तुम्हीं विराजत।
तिहूँ लोक में डंका बाजत।।
शुम्भ निशुम्भ दानव तुम मारे।
रक्त बीज शंखन संहारे।।
महिषासुर नृप अति अभिमानी।
जेहि अघ भार महि अकुलानी।।
रूप कराल कालि को धारा।
सेन सहित तुम तिहि संहारा।।
परी भीर संतन पर जब जब।
भई सहाय मातु तुम तब तब।।
अमर पुरी अरु बासवलोका।
तब महिमा सब रहे अशोका।।
ज्वाला में है ज्योति तुम्हारी।
तुम्हें सदा पूजें नर नारी।।
प्रेम भक्ति से जो यश गावें।
दुःख दारिद्र निकट नहिं आवे।।
ध्यावे तुम्हें जो नर मन लाई।
जन्म-मरण ताकौ छुटि जाई।।
जोगी सुर मुनि कहत पुकारी।
योग न होय बिन शक्ति तुम्हारी।।
शंकराचार्य जब तप कीन्हों।
काम क्रोध जीति सब लीनो।।

निशदिन ध्यान धरो शंकर को।
काहु काल नहिं सुमिरो तुमको।।

शक्ति रूप का मरम न पायो।
शक्ति गई तब मन पछतायो।।

शरणागत हुई कीर्ति बखानी।
जय जय जय जगदम्बे भवानी।।

भई प्रसन्न आदि जगदम्बा।
दई शक्ति नहीं कीन विलम्बा।।

मोको मातु कष्ट अति घेरो।
तुम बिन कौन हरे दुःख मेरो।।

आशा तृष्णा निपट सतावैं।
रिपु मुरख मोहि आति डरपावैं।।

शत्रु नाशा कीजे महारानी।
सुमिरो इकचित तुम्हें भवानी।।

करो कृपा हे मातु दयाला।
ऋद्धि-सिद्धि दे करँहु निहाला।।

जब लगि जिऊँ दया फल पाऊँ।
तुम्हरो यश में सदा ही गाऊँ।।

दुर्गा चालीसा जो कोई गावै।
सब सुख भोग परम पद पावै।।

भक्त सभी शरण निज जानी।
करहुँ कृपा जगदम्बे भवानी।।

आरती श्री दुर्गा जी की

ओ३म जय अम्बे गौरी मैया जय श्यामा गौरी।
तुमको निश दिन ध्यावत हरि ब्रह्मा शिवरी।। जय अम्बे०

माँग सिंदूर विराजत टीको मृगमद को। मैया-
उज्जवल से दोऊ नैना चन्द्र बदन नीको।। जय०

कनक समान कलेवर रक्ताम्बर राजे। मैया-
रक्त पुष्प गलमाला कण्ठन पर साजे।। जय०

केहरि वाहन राजत खड्ग खपर धारी। मैया-
सुर नर मुनिजन सेवत तिनके दुःख हारी।। जय०

कानन कुण्डल शोभित नासाग्रे मोती। मैया-
कोटिक चन्द्रदिवाकर राजत सम ज्योति।। जय०

शुम्भ निशुम्भ विदारे महिषासुर घाती। मैया-
धूम्रविलोचन नैयना निशिदिन मदमाती।। जय०

चौंसठ योगिनी गावत नृत्य करत भैरों। मैया-
बाजत ताल मृदंगा अरु बाजत डमरू। जय०

भुजा चार अति शोभित वर-मुद्रा धारी। मैया-
मन वांछित फल पावत सेवत नर नारी।। जय०

कंचन थाल विराजत अगर कपूर बाती। मैया-
श्री मालकेतु में राजत कोटि रतन ज्योति।। जय०

अम्बे जी की आरती जो कोई नर गावे। मैया-
कहत शिवानन्द स्वामी सुख सम्पति पावे।। जय०

हम अति दीन दुखी माँ! विपत-जाल घेरे।
हैं कपूत अति कपटी, पर बालक तेरे।।

निज स्वभाव वश जननी! दया दृष्टि कीजै।
करुणा कर करुणामयी! चरण-शरण दीजै।।

बिन्ध्येश्वरी जगन्मातः भक्तानुग्रहकारिणी।
बद्री भक्त नुते देवी झण्डे वाली नमोऽस्तुते।।

महारानी जी की आरती

रात गई दिन चढ़ गया मेरी अम्बे,
हो रही है जय जय कार मन्दिर बिच आरती जै माँ।
जी गुफा दे विच आरती जै माँ।।
गुड दी रोडी मौली दा कंगना,
आदि गणेश मनाया। (मन्दिर विच ....)
किस सुहागन तेरी जोत जगाई,
कौन जागे सारी रात। (मन्दिर विच ....)
ध्यानू दी बहन तेरी जोत जगाई,
ध्यानू जागे सारी रात। (मन्दिर विच ....)
काहे की मैया तेरी जोत जगाई,
काहे की पाई विच बत्ती। (मन्दिर विच ....)
सर्व सोने दी भगता तेरी जोत जगाई,
हीरोयाँ दी पाई विच बत्ती (मन्दिर विच ....)
किन किन मैया तेरा भवन बनाया,
किन किन चँवर झुलाया (मन्दिर विच ....)
पजाँ पजाँ पाण्डवा तेरा भवन बनाया,
अर्जुन चँवर झुलाया। (मन्दिर विच ....)

नंगी नंगी पैरी देवी अकबर आया
सोने दा छत्तर चढ़ाया (मन्दिर विच ....)

खोले खजाने बैठी वर दाती ऐ,
खैर खजानेओ पाया। (मन्दिर विच ....)

दर मैया तेरे तेली वसदा,
जगमग जोत जगाई। (मन्दिर विच ....)

ब्रह्मा वेद पढ़े तेरे द्वारे,
शंकर ध्यान लगाया। (मन्दिर विच ....)

ऊँचे ऊँचे पर्वत बने शिवालय,
नीचे शहर बसाया। (मन्दिर विच ....)

जुग जुग जीवे तेरा जम्मु दा राजा,
जिस तेरा भवन बनाया। (मन्दिर विच ....)

रल मिल सगतां तेरी जोत जगाई,
रख चरणाँ दे कोल। (मन्दिर विच ....)

सिमर चरण तेरा भक्त यश गावे,
रखदी बच्चे दी लाज। (मन्दिर विच ....)

रात गई दिन चढ़ गया मेरी अम्बे,
हो रही है जय जय कार (मन्दिर विच ....)

महारानी जी की अरदास

सोम सोम दे भरे भण्डारे तेरे,
मंगल मेहर दा बख्शी दान माता,
बुध बुद्धि दे विच प्रकाश होवे,
वीर वीरता दा बख्शी दान माता,
शुक्र शुक्र करां तेरा हर वेले,
शनि शान्ति दे होन समान माता,
ऐतवार विश्वास यकीन होवे,
पूर्ण कर दो सारे काज माता,
ऐ माता मातेश्वरी सर्व सुखों की खान,
मां देवन वाली एक है मांगत कुल जहान
आज वी तेरा आसरा कल वी तेरी आस,
घडी घडी मां आसरा ज्येष्ठ बारह मास,
मेरी दाती के दरबार में सभी खड़े हाथ जोड़,
मां देवन वाली एक है माँगत लख करोड़,
ऐत अम्बका जी हिंगलाज ज्वाला माँ,
तेरा पर्वता दे विच दरबार मात,
सोम सरस्वती कालका भद्रकाली,
तैनू सिमरदाऊ कुल संसार माता,
मंगल मनसा देवी तू है पिंड रानी,

समय समय ते लेवे अवतार माता,
बुध वीर दा भरी महान शक्ति
बगे शेर ते होवे सवार माता,
वीर वैष्णो देवी नैना देवी मैया,
लखाँ भक्ता दिते ने तार माता,
शुक्र शक्ति भवानी कृपालु है तू,
कई जालिमा नू दिता है मार माता,
शनि शान्ति रूप महान् दुर्गे,
तैनू भक्त सिमरण सतेवार माता,
तेरे चरणा तो जावां बलिहार माता,
रूप ईक ते नाम अनेक तेरे,
मेहर करो मातेश्वरी आये तेरे द्वार,
रख लाज दाती आन के करते हैं नमस्कार।

जयकारा

झण्डे वाली माता तेरी सदा ही जय,
शेराँ वाली माता तेरी सदा ही जय।
जोताँ वाली माता तेरी सदा ही जय,
भौना वाली माता तेरी सदा ही जय।

जयकारा - जयकारा माँ का जयकारा - जयकारा- जयकारा
जयकारा बोलो जी, कभी ना डोलो जी,
बोलो जी, बोलो जी जय जय जय जय
सच्चे मन से एक बार जो माँ– का जयकारा बोले
जन्म जन्म के बन्धन काटे, दर खुशियों के खोले
माता माता हर कोई बोले मैं भी बोलूँ माता
माता की कृपा से बंदा भवसागर तर जाता

बिगड़ी माँ तकदीर बनाये, सोये भाग जगाती,
जहाँ जहाँ जयकारे लगदे वहीं वहीं माँ आती
धरती बोले अम्बर बोले बोले ये जग सारा
सारे देवी देवताओं से माँ का नाम प्यारा
घर घर में है माँ की महिमा, गली गली जगराते
भक्त सभी हैं भक्तों मैया के गुण गाते

जय-जय झण्डे वाली बोलो, जय जय शेराँ वाली,
दाती के दरबार से भक्तों कोई ना लौटा खाली।

जयकारा बोलो जी - कभी ना डौलो जी,
बोलो जी, बोलो जी, जय जय जय जय
प्रेम से बोले - जय माता दी, सारे बोलो जय माता दी।
जोर से बोलो - जय माता दी, पहाड़ा वाली जय माता दी
मेहरांवाली - जाय माता दी, शेरां वाली - जय माता दी
जय माता दी - जय माता दी - जय माता दी

तारा रानी की कथा

माता के जगराते में महारानी तारा देवी की कथा कहने सुनने की परम्परा प्राचीन काल से ही चली आती है। बिना इस कथा के जागरण को सम्पूर्ण नहीं माना जाता। यद्यपि पुराणों या ऐतिहासिक पुस्तकों में इसका कोई उल्लेख नहीं है, तथापि माता के प्रत्येक जागरण में इसको सम्मिलित करने का परम्परागत विधान है। कथा इस प्रकार है–

कथा प्रारम्भ

महाराज दत्त की दो पुत्रियाँ तारा देवी एवं रुकमन भगवती दुर्गा जी की भक्ति में अटूट विश्वास रखती थीं। दोनों बहनें नियम पूर्वक एकादशी का व्रत किया करती थीं तथा माता के जागरण में प्रेम के साथ कीर्तन एवं महाम्य कहा सुना करती थीं।

एकादशी के दिन एक बार भूल से छोटी बहिन रुकमन ने मांसाहार कर लिया। जब तारा देवी को पता लगा तो उसे रुकमन पर बड़ा क्रोध आया और बोली–तू है तो मेरी बहन, परन्तु मनुष्य देह पाकर भी तूने नीच योनि के प्राणी जैसा कर्म किया है। तु तो छिपकली बनने योग्य है। बड़ी बहन के मुख

से निकले शब्दों को रुकमन ने शिरोधार्य कर लिया और साथ ही प्रायश्चित का उपाय पूछा। तारा ने कहा – त्याग और परोपकार से सब पाप छूट जाते हैं। दूसरे जन्म में तारा देवी इन्द्र लोक की अप्सरा बनी और छोटी बहन रुकमन छिपकली की योनि में प्रायश्यिचत का अवसर ढूंढ़ने लगी। द्वापर युग में जब पाँचों पाण्डवों ने अश्वमेध यज्ञ किया तब उन्होंने दूत भेजकर दुर्वासा ऋषि सहित तैंतीस करोड़ देवताओं को निमन्त्रण दिया। जब दूत दुर्वासा ऋषि के स्थान पर निमन्त्रण लेकर गया तो दुर्वासा ऋषि बोले – यदि तैंतीस करोड़ देवता उसमें भाग लेंगे तो मैं उसमें सम्मिलित नहीं हो सकता दूत तैंतीस करोड़ देवताओं को निमन्त्रण देकर वापिस पहुँचा और दुर्वासा ऋषि का वृत्तान्त पाण्डवों को सुनाया कि वह सब देवताओं को बुलाने पर नहीं आवेंगे।

यज्ञ आरम्भ हुआ। तैंतीस करोड़ देवता यज्ञ में भाग लेने आए। उन्होंने दुर्वासा ऋषि जी को न देखकर पाण्डवों से पूछा कि ऋषि को क्यों नहीं बुलवाया। इस पर पाण्डवों ने नम्रता सहित उत्तर दिया कि निमन्त्रण भेजा था, परन्तु अहंकार के कारण वे नहीं आये, यज्ञ में पूजन-हवन आदि निर्विघ्न समाप्त हुए। भोजन के लिए भण्डारों की तैयारी होने लगी।

दुर्वासा ऋषि ने देखा कि पाण्डवों ने उनकी उपेक्षा कर दी है तो उन्होंने अत्यन्त क्रोध करके पक्षी का रूप धारण किया और चोंच में सर्प लेकर भंडारे में फेंक दिया जिसका किसी को पता न चला। वह सर्प खीर की कढ़ाई में गिरकर छिप गया। एक छिपकली (जो पिछले जन्म में तारा देवी की छोटी बहन थी, तथा बहन के शब्दों को शिरोधार्य कर इस जन्म में छिपकली बनी) सर्प का भण्डारे में गिरना देख रही थी। उसे त्याग व परोपकार की शिक्षा अब तक याद थी। वह भंडार घर की दीवार पर चिपकी समय की प्रतीक्षा करती रही। कई लोगों के प्राण बचाने हेतु उसने प्रण न्योछावर कर देने का मन ही मन निश्चय किया।

जब खीर भंडारे में दी जाने वाली थी तो सबकी आँखों के सामने वह छिपकली दीवार से कूदकर कढ़ाई में जा गिरी। निदान लोग छिपकली को बुरा–भला कहते हुए खीर की कढ़ाई को खाली करने लगे उस समय उन्होंने उसमें मरे हुए एक सांप को देखा। अब सबको मालूम हुआ कि छिपकली ने अपने प्राण देकर उन सबके प्राणों की रक्षा की है। इस प्रकार उपस्थित सभी सज्जनों और देवताओं ने उस छिपकली के लिए प्रार्थना की कि उसे सब योनियों में उत्तम मनुष्य जन्म प्राप्त

हो तथा अन्त में वह मोक्ष को प्राप्त करे। तीसरे जन्म में वह छिपकली राजा 'सपरश' के घर कन्या बनी। दूसरी बहिन तारा देवी ने फिर मनुष्य जन्म लेकर तारामती नाम से अयोध्या के प्रतापी राजा हरिश्चन्द्र के साथ विवाह किया।

राजा सपरश ने ज्योतिषियों से कन्या की कुन्डली बनवाई ज्योतिषियों ने राजा को बताया कि कन्या राजा के लिए हानिकारक सिद्ध होगी, शकुन ठीक नहीं है अतः आप इसे मरवा दीजिए। राजा बोले-लड़की को मारने का पाप बहुत बड़ा है। मैं उस पाप का भागी नहीं बन सकता। तब ज्योतिषियों ने विचार करके राय दी-हे राजन! आप एक लकड़ी के सन्दूक में ऊपर से सोना-चाँदी आदि जड़वा दें। फिर उस सन्दूक के भीतर लड़की को बन्द करके नदी में प्रवाहित कर दीजिए। सोने चाँदी जड़ा हुआ सन्दूक अवश्य ही कोई लालच से निकाल लेगा। और आपकी कन्या को भी पाल लेगा। आपको किसी प्रकार का पाप न लगेगा। ऐसा ही किया गया और नदी में बहता हुआ सन्दूक काशी के समीप एक भंगी को दिखाई दिया। वह सन्दूक को नदी से बाहर निकाल लाया। जब खोला तो सोने चाँदी के अतिरिक्त अत्यन्त रूपवान कन्या दिखाई

दी। उस भंगी के कोई सन्तान नहीं थी। जब उसने अपनी पत्नी को वह कन्या लाकर दी तो पत्नी की प्रसन्नता का ठिकाना न रहा। उसने अपनी संतान के समान ही बच्ची को छाती से लगा लिया। भगवती की कृपा से उसके स्तनों में दूध उतर आया। पति-पत्नी दोनों ने प्रेम से कन्या का नाम 'रुक्को' रख दिया।

रुक्को की सास महाराजा हरिश्चन्द्र के घर सफाई आदि का काम करने जाया करती थी। एक दिन वह बीमार पड़ गई। निदान रुक्को महाराज हरिश्चन्द्र के घर काम करने के लिए पहुँच गई। महाराजा की पत्नी तारामती ने रुक्को को देखा तो वह अपने पूर्व जन्म के पुण्य से उसे पहिचान गई। तब तारामती ने रुक्को से कहा -हे बहन! तुम मेरे यहाँ निकट आकर बैठो। महारानी की बात सुनकर रुक्को बोली-रानी जी। मैं नीच जाति की भंगिन हूँ, भला मैं आपके पास कैसे बैठ सकती हूँ!

तब तारामती ने कहा-बहिन! पूर्व जन्म में तुम मेरी सगी बहिन थीं। एकादशी का ब्रत खंडित करने के कारण तुम्हें छिपकली की योनि में जाना पड़ा। जो होना था सो हो चुका। अब तुम अपने इस जन्म को सुधारने का उपाय करो तथा भगवती वैष्णों माता की

सेवा करके अपना जन्म सफल बनाओ। यह सुनकर रुक्को को बड़ी प्रसन्नता हुई और उसने उपाया पूछा। रानी ने बताया कि वैष्णो माता सब मनोरथों को पूरा करने वाली हैं। जो लोग श्रद्धापूर्वक माता का पूजन व जागरण करते हैं, उनकी सब मनोकामनाएँ पूर्ण होती हैं।

रुक्को ने प्रसन्न होकर माता की मनौती करते हुए कहा–हे माता! यदि आपकी कृपा से मुझे एक पुत्र प्राप्त हो जाय तो मैं भी आपका पूजन व जागरण करवाऊँगी। प्रार्थना को माता ने स्वीकार कर लिया, फलस्वरूप दसवें महीने उसके गर्भ से एक अत्यन्त सुन्दर बालक ने जन्म लिया परन्तु दुर्भाग्यवश रुक्को को माता का पूजन जागरण करने का ध्यान ही न रहा, परिणम यह हुआ कि जब वह बालक पाँच वर्ष का हुआ तो एक दिन उसे माता (चेचक) निकल आई। रुक्को दुःखी होकर अपने पूर्व जन्म की बहिन तारामती के पास आई और बच्चे की बीमारी का सब वृत्तान्त कह सुनाया। तब तारामती ने कहा तू जरा ध्यान करके देख कि तुझसे माता के पूजन में कोई भूल तो नहीं हुई। इस पर रुक्को को छः वर्ष पहले की बात का ध्यान आ गया और उसने अपराध स्वीकार कर लिया उसने फिर मन में निश्चय किया कि बच्चे

को आराम आने पर अवश्य जागरण करवाऊँगी।

भगवती की कृपा से बच्चा दूसरे दिन ही ठीक हो गया। तब रुक्को ने देवी के मन्दिर में जाकर पंडित से कहा कि मुझे अपने घर माता का जागरण करना है, तो आप मंगलवार को मेरे घर पधार कर कृतार्थ करें। पंडित जी बोले-अरी रुक्को, तू यहीं पाँच रुपये दे जा, हम तेरे नाम से मन्दिर में ही जागरण करवा देंगे। तू नीच जाति की स्त्री है। इसलिए हम तेरे घर में जाकर देवी का जागरण नहीं कर सकते। रुक्को ने कहा-हे पंडित जी माता के दरबार में तो ऊँच-नीच का कोई विचार नहीं होता। वे तो सब भक्तों पर समान रूप से कृपा करती हैं। अतः आपको कोई एतराज नहीं होना चाहिए। इस पर पंडित ने आपस में विचार करके कहा कि यदि महारानी तारामती तुम्हारे जागरण में पधारें तब तो हम भी स्वीकार कर लेंगे।

यह सुनकर रुक्को महारानी के पास गई और सब वृतान्त कह सुनाया। तारामती ने जागरण में सम्मिलित होना स्वीकार कर लिया। जिस समय रुक्को पंडितों से यहं कहने गई कि महारानी जी जागरण में आवेंगी उस समय सैन नाई ने सुन लिया और महाराजा हरिश्चन्द्र को जाकर सूचना दी। राजा ने सौन नाई से सब बात

सुनकर कहा कि तेरी बात झूठी है। महारानी भंगियों के घर जागरण में नहीं जा सकती फिर भी परीक्षा लेने के लिए असने रात को अपनी ऊँगली पर थोड़ा सा चीरा लगा लिया जिससे नींद न आवे। रानी तारामती ने जब देखा कि जागरण का समय हो रहा है परन्तु महाराज को नींद नहीं आ रही तो उसने माता वैष्णो से मन ही मन प्रार्थना की कि हे माता! आप किसी उपाय से राजा को सुला दें। ताकि मैं जागरण में सम्मिलित हो सकूं। राजा को नींद आ गई तारामती रोशनदान से रस्सा बाँधकर महल से उतरी और रुक्को के घर जा पहुँची। उस समय जल्दी के कारण रानी के हाथ से रेशमी रुमाल तथा पाँव का एक कंगन रास्ते में ही गिर पड़ा। उधर थोड़ी देर बाद राजा हरिश्चन्द्रकी नींद खुल गई। तब वह भी रानी का पता लगाने निकल पड़े। मार्ग में कंगन व रुमाल उसने देखा और जागरण वाले स्थान पर जा पहुँचा। राजा ने दोनों चीजें रास्ते से उठाकर अपने पास रख लीं और जहाँ जागरण हो रहा था, वहाँ एक कोने में चुपचाप बैठकर सब दृश्य देखने लगा। जब जागरण समाप्त हुआ तो सबने माता की आरती व अरदास की। उसके बाद प्रसाद बाँटा गया। रानी तारामती को जब प्रसाद मिला तो उसने

झोली में रख लिया। यह देखकर लोगों ने पूछा आपने प्रसाद क्यों नहीं खाया? यदि आप न खावेंगी तो कोई भी प्रसाद न खाएगा। रानी बोली–तुमने जो प्रसाद दिया वह मैंने महाराज के लिए रख लिया। अब मुझे मेरा प्रसाद दे दो। अब की बार प्रसाद लेकर तारा ने खा लिया। इसके बाद भक्तों ने माता का प्रासाद खाया।

इस प्रकार जागरण समाप्त करके, प्रसाद खाने के पश्चात् रानी तारामती महल की ओर चली। तब राजा ने आगे बढ़कर रास्ता रोक लिया और कहा–तुने नीचों के घर का प्रसाद खाकर अपना धर्म–भ्रष्ट कर लिया, अब मैं तुझे अपने घर कैसे रखूँ? तूने तो कुल की मर्यादा व मेरी प्रतिष्ठा का कोई भी ध्यान नहीं रखा। जो प्रसाद तु अपनी झोली में रखकर मेरे लिए लाई है उसे खिलाकर मुझे भी अपवित्र करना चाहती है। ऐसा कहते हुए जब राजा ने झोली की ओर देखा तो भगवती की कृपा से प्रसाद के स्थान पर उसमें चम्पा, गुलाब, गेंदा के फूल, कच्चे चावल और सुपारियाँ दिखाई दीं यह चमत्कार देखकर राजा आश्चर्य चकित रह गया। राजा हरिश्चन्द्र रानी तारा को साथ लेकर महल में लौट आए। वहाँ रानी ने ज्वाला मैया की

शक्ति से बिना किसी माचिस या चकमक पत्थर की सहायता लिए राजा को अग्नि प्रज्ज्वलित करके दिखाई, जिसे देखकर राजा का आश्चर्य और बढ़ गया। राजा के मन में भी देवी के प्रति विश्वास तथा श्रद्धा जाग उठी।

इसके बाद राजा ने रानी से कहा–मैं माता के प्रत्यक्ष दर्शन करना चाहता हूँ। रानी बोली–प्रत्यक्ष दर्शन पाने के लिए बहुत बड़ा त्याग होना चाहिए। यदि आप अपने पुत्र रोहिताश्व की बलि दे सकें तो आपको दुर्गा देवी के प्रत्यक्ष दर्शन भी प्राप्त हो सकते हैं। राजा के मन में तो देवी के दर्शन की लगन हो गई थी। राजा ने पुत्र मोह त्यागकर रोहिताश्व का सिर देवी को अर्पण कर दिया। ऐसी सच्ची श्रद्धा एवं विश्वास देख दुर्गा माता सिंह पर सवार होकर उसी समय वहाँ प्रकट हो गई और राजा हरिश्चन्द्र दर्शन करके कृतार्थ हुए। मरा हुआ पुत्र भी जीवित हो गया। चमत्कार देख राजा हरिश्चन्द्र गदगद हो गये। उन्होंने विधिपूर्वक माता का पूजन करके अपराधों की क्षमा माँगी। सुखी रहने का आर्शीवाद देकर माता अन्तधर्यान हो गई।

राजा ने तारा रानी की भक्ति की प्रशंसा करते हुए कहा-हे तारा! मैं तुम्हारे आचरण से अति प्रसन्न हूँ। मेरे धन्य भाग, जो तुम मुझे पत्नि रूप में प्राप्त हुई। इसके पश्चात राजा हरिश्चन्द्र ने रानी तारा देवी की इच्छानुसार अयोध्यापुरी में माता का एक भव्य मन्दिर तैयार करवा दिया। आयु-पर्यन्त सुख भोगने के पश्चात राजा हरिश्चन्द्र रानी तारा एवं रुक्मन भंगिन तीनों ही मनुष्य योनि से छूटकर देवलोक को प्राप्त हुए। माता के जागरण में रानी तारा की इस कथा को जो मनुष्य भक्ति पूर्वक पढ़ता या सुनता है, उसकी सभी मनोमाकनायें पूर्ण होती हैं, सुख एवं समृद्धि बढ़ती है, शत्रुओं का नाश एवं सर्वमंगल होता है। इस कथा के बिना जागरण पूरा नहीं माना जाता।

।। बोल सांचे दरबार की जय।।

श्री हनुमान चालीसा

दोहा

श्रीगुरु चरन सरोजरज
निजमनु मुकुरु सुधारि।
वरनऊँ रघुवर विमल जसु
जो दायकु फल चारि।।
बुद्धिहीन तनु जानिके,
सुमिरौं पवन-कुमार।
बल बुधि विद्या देहु मोहि,
हरहु कलेस बिकार।।

चौपाई

जय हनुमान ज्ञान गुन सागर।
जय कपीस तिहूँ लोक उजागर।।
राम दूत अतुलित बलधामा।
अंजनि-पुत्र पवनसुत नामा।।
महाबीर बिक्रम बजरंगी।
कुमति निवार सुमति के संगी।।
कंचन बरन बिराज सुबेसा।
कानन कुंडल कुंचित केसा।।
हाथ बज्र और ध्वजा बिराजै।
काँधे मूँज जनेऊ साजै।।

संकर सुवन केसरीनंदन।
तेज प्रताप महा जग बंदन।।

विद्यावान गुनी अति चातुर।
राम काज करिबे को आतुर।।

प्रभु चरित्र सुनिबे को रसिया।
राम लखन सीता मन बसिया।।

सूक्ष्म रूप धरि सियहिं दिखावा।
बिकट रूप धरि लंक जरावा।।

भीम रूप धरि असुर सँहारे।
रामचंद्र के काज सँवारे।।

लाय सजीवन लखन जियाये।
श्रीरघुबीर हरषि उर लाये।।

रघुपति कीन्ही बहुत बड़ाई।
तुम मम प्रिय भरतहि सम भाई।।

सहस बदन तुम्हरो जस गावैं।
उस कहि श्रीपति कंठ लगावैं।।

सनकादिक ब्रह्मादि मुनीसा।
नारद सारद सहित अहीसा।।

जम कुबेर दिगपाल जहाँ ते।
कवि कोबिद कहि सके कहाँ ते।।

तुम उपकार सुग्रीवहिं कीन्हा।
राम मिलाय राज पद दीन्हा।।

तुम्हरो मंत्र बिभीषन माना।
लंकेस्वर भए सब जग जाना।।

जुग सहस्त्र जोजन पर भानू।
लील्यो ताहि मधुर फल जानू।।

प्रभु मुद्रिका मेलि मुख माहीं।
जलधि लाँघि गये अचरज नाहीं।।

दुर्गम काज जगत के जेते।
सुगम अनुग्रह तुम्हारे तेते।।

राम दुआरे तुम रखवारे।
होत न आज्ञा बिनु पैसारे।।

सब सुख लहै तुम्हारी सरना।
तुम रच्छक काहू को डर ना।।

आपन तेज सम्हारो आपै।
तीनों लोक हाँक तें काँपै।।

भूत पिसाच निकट नहिं आवै।
महाबीर जब नाम सुनावै।।

नासै रोग हरै सब पीरा।
जपत निरंतर हनुमत बीरा।।

संकट तें हनुमान छुड़ावै।
मन क्रम बचन ध्यान जो लावै।।

सब पर राम तपस्वी राजा।
तिन के काज सकल तुम साजा।।

और मनोरथ जो कोइ लावै।
सोइ अमित जीवन फल पावै।।

चारों जुग परताप तुम्हारा।
है परसिद्ध जगत उजियारा।।

साधु संत के तुम रखवारे।
असुर निकंदन राम दुलारे।।

अष्ट सिद्धि नौ निधि के दाता।
अस बर दीन जीनकी माता।।

राम रसायन तुम्हरे पासा।
सदा रहो रघुपति के दासा।।

तुम्हरे भजन राम को पावै।
जनम जनम के दुख बिसरावै।।

अंत काल रघुबर पुर जाई।
जहाँ जन्म हरि-भक्त कहाई।।

और देवता चित्त न धरई।
हनुमत सेइ सर्ब सुख करई।।

संकट कटै मिटै सब पीरा।
जो सुमिरै हनुमत बलबीरा।।

जै जै जै हनुमान गोसाईं।
कृपा करहु गुरु देव की नाईं।।

जो सत बार पाठ कर कोई।
छूटहि बंदि महा सुख होई।।

जो यह पढ़े हनुमान चलीसा।
होय सिद्धि साखी गौरीसा।।

तुलसीदास सदा हीं चेरा।
कीजै नाथ हृदय मँह डेरा।।

दोहा

पवनतनय संकट हरन,
मंगल मूरति रूप।
राम लखन सीता सहिता,
हृदय बसहु सुर भूप।।

।।इति।।

संकटमोचन हनुमानाष्टक

मत्तगयन्द छन्द

बालि समय रबि भक्षि लियो तब
तीनहुँ लोक भयो अँधियारो।
ताहि सों त्रास भयो जग को
यह संकट काहु सों जात न टारो।।
देवन आनि करी बिनती तब
छाँड़ि दिया रबि कष्ट निवारो।
को नहिं जानत है जगमें कपि
संकटमोचन नाम तिहारो।।१।।

बालि की त्रास कपीस बसै गिरि
जात महाप्रभु पंथ निहारो।
चौंकि महा मुनि साप दियो तब
चाहिय कौन बिचार बिचारो।।
कै द्विज रूप लिवाय महाप्रभु
सो तुम दास के सोक निवारो। को।।२।।

अंगद के सँग लेन गये सिय
खोज कपीस यह बैन उचारो।
जीवत ना बचिहौ हम सो जु
बिना सुधि लाए इहाँ पगु धारो।।

हेरि थके तट सिंधु सबै तब लाय
सिया-सुधि प्रान उबारो। को०-३।।

रावन त्रास दई सिय को सब
राक्षसि सों कहि सोक निवारो।
ताहि समय हनुमान महाप्रभु
जाय महा रजनीचर मारो।।
चाहत सीय असोक सों आगि सु
दै प्रभु मुद्रिका सोक निवारो। को०-४।।

बान लग्यो उर लछिमन के तब
प्रान तजे सुत रावन मारो।
लै गृह बैद्य सुषेन समेत
तबै गिरि द्रोन सु बीर उपारो।।
आनि सजीवन हाथ दई तब
लछिमन के तुम प्रान उबारो। को०-५।।

रावन जुद्ध अजान कियो तब
नाग कि फाँस सबै सिर डारो।
श्रीरघुनाथ समेत सबै दल
मोह भयो यह संकट भारो।।
आनि खगेस तबै हनुमान जु
बंधन काटि सुत्रास निवारो। को०-६।।

बंधु समेत जबै अहिरावन
लै रघुनाथ पताल सिधारो।
देबिहिं पूजि भली बिधि सों बलि
देउ सबै मिलि मंत्र उचारो।।
जाय सहाय भयो तब ही
अहिरावन सैन्य समेत सँहारो। का०-७।।

काज किये बड़ देवन के तुम
बीर महाप्रभु देखि बिचारो।
कौन सो संकट मोर गरीब को
जो तुमसों नहिं जात है टारो।।
बेगि हरो हनुमान महाप्रभु
जो कुछ संकट होय हमारो।।को०-८।।

दो० – लाल देह लाली लसे, अरु धरि लाल लँगूर।
बज्र देह दानव दलन, जय जय जय कपिसूर।।

।।इति संकटमोचन हनुमानाष्टक सम्पूर्ण।।

श्री हनुमत-स्तवन

सो० —प्रनवउँ पवनकुमार खल बन पावक ग्यानघन।
जासु हृदय आगार बसहिं राम सर चाप धर।।

अतुलितबलधामं हेमशैलाभदेहं
दनुजवनकृशानुं ज्ञानिनामग्रगण्यम्।
सकलगुणनिधानं वानराणामधीशं
रघुपतिप्रियभक्तं वातजातं नमामि।।

गोष्पदीकृतवारीशं मशकीकृतराक्षसम्
रामायणमहामालारत्नं वन्देऽनिलात्मजम्।
अञ्जनानन्दनं वीरं जानकीशोकनाशनम्
कपीशमक्षहन्तारं वन्दे लङ्काभयङ्करम्।।

उल्लङ्घ्य सिन्धोः सलिलं सलीलं
यः शोकवह्निं जनकात्मजायाः।
आदाय तेनैव ददाह लङ्कां
नमामि तं प्राञ्जलिराञ्जनेयम्।।

मनोजवं मारुततुल्यवेगं जितेन्द्रियं बुद्धिमतां वरिष्ठम्।
वातात्मजं वानरयूथमुख्यं श्रीरामदूतं शरणं प्रपद्ये।।

आञ्जनेयमतिपाटलाननं काञ्चनाद्रिकमनीयविग्रहम्।
पारिजाततरुमूलवासिनं भावयामि पवमाननन्दनम्।।

यत्र यत्र रघुनाथकीर्तनं तत्र तत्र कृतमस्तकाञ्जलिम्।
वाष्पवारिपरिपूर्णलोचनं मारुतिं नमत राक्षसान्तकम्।।

श्री हनुमत् जी की आरती

आरती कीजै हनुमान लला की। दुष्टदलन रघुनाथ कला की।। टेक।।
जाके बल से गिरिवर काँपै। रोग-दोष जाके निकट न झाँपै।।१।।
अंजनि पुत्र महा बलदाई। संतन के प्रभु सदा सहाई।।२।।
दे बीरा रघुनाथ पठाये। लंका जारि सीय सुधि लाये।।३।।
लंका सो कोट समुद्र सी खाई। जात पवनसुत बार न लाई।।४।।
लंका जारि असुर संहारे । सियारामजीके काँज सँवारे।।५।।
लक्ष्मण मूर्छित पड़े सकारे। आनि संजीवन प्रान उबारे।।६।।
पैठी पताल तोरि जम-कारे। अहिरावन की भुजा उखारे।।७।।
बायें भुजा असुर दल मारे। दहिने भुजा संतजन तारे।।८।।
सुर नर मुनि आरती उतारे। जै जै जै हनुमान उचारे।।९।।
कंचन थार कपूर लौ छाई। आरती करत अंजना माई।।१०।।
जो हनुमान (जी) की आरती गावै। बसि वैकुंठ परमपद पावै।।११।।

श्रीरामवन्दना

आपदामपहर्तारं दातारं सर्वसम्पदाम्।
लोकाभिरामं श्रीरायं भूयो नेमाम्यहम्।।
रामाय रामभद्राय रामचन्द्राय वेधसे।
रघुनाथाय नाथाय सीतायाः पतये नमः।।

नीलाम्बुजश्यामलकोमलाङ्गं
सीतासमारोपितवामभागम्　।
पाणौ　महासायकचारुचापं।
नमामि　रामं　रघुवंशनाथम्।।

श्रीराम-स्तुति

श्रीरामचन्द्र कृपालु भजु मन हरण भवभय दारुणं।
नवकंज-लोचन, कंज-मुख, करकंज पद कंजारुणं।।

कंदर्प अगणित अमित छवि, नवनील-नीरद सुंदरं।
पट पीत मानहु तड़ित रुचि शुचि नौमि जनक सुतावरं।।

भजु दीनबंधु दिनेश दानव-दैत्यवंश-निकंदनं।
रघुनंद आनँदकंद कोशलचंद दशरथ-नंदनं।।

सिर मुकुट कुंडल तिलक चारु उदारु अंग बिभूषणं।
आजानुभुज शर-चाप-धर, संग्राम-जित-खरदूषणं।।

इति वदति तुलसीदास शंकर-शेष-मुनि-मन-रंजनं।
मम हृदय-कंज निवास कुरु, कामादि खलदल-गंजनं।।

मनु जाहिं राचेउ मिलिहि सो बरु सहज सुंदर साँवरो।
करुना विधान सुजान सीलु स्नेहु जानत रावरो।।
एहि भाँति गौरि असीस सुनि सिय सहित हियँ हरषीं अली।
तुलसी भवानिहि पूजि पुनि पुनि मुदित मन मंदिर चली।।

सो० –जानि गौरि अनुकूल सिय हिय हरषु न जाइ कहि।
मंजुल मंगल मूल बाम अंग फरकन लगे।।

।।सियावर रामचंद्र की जय।।

श्रीरामावतार

भए प्रगट कृपाला दीनदयाला कौसल्या हितकारी।
हरषित महतारी मुनि मन हारी अद्भुत रूप बिचारी।।

लोचन अभिरामा तनु घनस्यामा निज आयुध भुज चारी।
भूषन बनमाला नयन बिसाला सोभासिंधु खरारी।।

कह दुइ कर जोरी अस्तुति तोरी केहि बिधि करौं अनंता।
माया गुन ग्यानातीन अमाना बेद पुरान भनंता।।

करुना सुखसागर सब गुन आगर जेहि गावहिं श्रुति संता।
सो मम हित लागी जन अनुरागी भयउ प्रगट श्रीक़ंता।।

ब्रह्मांड निकाया निर्मित माया रोम रोम प्रति बेद कहै।
मम उर सो बासी यह उपहासी सुनत धीर मति थिर न रहै।।

उपजा जब ग्याना प्रभु मुसुकाना चरित बहुत बिधि कीन्ह चहै।
कहि कथा सुहाई मातु बुझाई जेहि प्रकार सुत प्रेम लहै।।

माता पुनि बोली सो मति डोली तजहु तात यह रूपा।
कीजै सिसुलीला अति प्रियसीला यह सुख परम अनूपा।।

सुनि बचन सुजाना रोदन ठाना होइ बालक सुरभूपा।
यह चरित जे गावहिं हरिपद पावहिं ते न परहिं भवकूपा।।

✦✦✦✦✦✦✦✦✦

श्री देवी जी की आरती

जगजननी जय! जय!! (मा! जगजननी जय! जय!!)
भयहारिणि, भवतारिणि, भवभामिनि जय! जय!! जग०

तू ही सत-चित-सुखमय शुद्ध ब्रह्मरूपा।
सत्य सनातन सुन्दर पर-शिव सूर-भूपा।।१।। जगजननी०

आदि अनादि अनामय अविचल अविनाशी।
अमल अनन्त अगोचर अज आनँदराशी।।२।। जग०

अविकारी, अघहारी, अकल, कलाधारी।
कर्त्ता विधि, भर्त्ता हरि, हर सँहारकारी।।३।। जग०

तू विधिवधू, रमा, तू उमा, महामाया।
मूल प्रकृति विद्या तू, तू जननी, जाया।।४।। जग०

राम, कृष्ण तू, सीता, व्रजरानी राधा।
तू वाञ्छाकल्पद्रुम, हारिणि सब बाधा।।५।। जग०

दश विद्या, नव दुर्गा, नानाशस्त्रकरा।
अष्टमातृका, योगिनि, नव नव रूप धरा।।६।। जग०

तू परधामनिवासिनि, महाविलासिनि तू।
तु ही श्मशानविहारिणि, ताण्डवलासिनि तू।।७।। जग०

सुर-मुनि-मोहिनि सौम्या तू शोभाऽऽधारा।
विवसन विकट-सरूपा, प्रलयमयी धारा।।८।। जग०

तू ही स्नेह-सुधामयि, तू अति गरलमना।
रत्नविभूषित तू ही, तू ही अस्थि-तना।।९।। जग०

मूलाधारनिवासिनि, इह-पर-सिद्धिप्रदे।
कालातीता काली, कमला तू वरदे।।१०।। जग०

शक्ति शक्तिधर तू ही नित्य अभेदमयी।
भेदप्रदर्शिनि वाणी विमले! वेदत्रयी।।११।। जग०

हम अति दीन दुखी मा! विपत-जाल घेरे।
हैं कपूत अति कपटी, पर बालक तेरे।।१२।। जग०

निज स्वभाववश जननी! दयादृष्टि कीजै।
करुणा कर करुणामयि! चरण-शरण दीजै।।१३।। जग०

देवीमयी

तव च का किल न स्तुतिरम्बिके!
सकलशब्दमयी किल ते तनुः।
निखिलमूर्तिषु मे भवदन्वयो
मनसिजासु बहिःप्रसरासु च।।
इति विचिन्त्य शिवे! शमिताशिवे!
जगति जातमयत्नवशादिदम्।
स्तुतिजपार्चनचिन्तनवर्जिता
न खलु काचन कालकलास्ति मे।।

'हे जगदम्बिके! संसार में कौन–सा वाङ्मय ऐसा है, जो तुम्हारी स्तुति नहीं है; क्योंकि तुम्हारा शरीर तो सकलशब्दमय है। हे देवि! अब मेरे मन में संकल्पविकल्पात्मक रूप से उदित होने वाली एवं संसार में दृश्य रूप से सामने आने वाली सम्पूर्ण आकृतियों में आप के स्वरूप का दर्शन होने लगा है। हे समस्त अमङ्गलध्वंसकारिणि कल्याण स्वरूपे शिवे! इस बात को सोचकर अब बिना किसी प्रयत्न के ही सम्पूर्ण चराचर जगत् में मेरी यह स्थिति हो गयी है कि मेरे समय का क्षुद्रतम अंश भी तुम्हारी स्तुति, जप, पूजा अथवा ध्यान से रहित नहीं है। अर्थात् मेरे सम्पूर्ण जागतिक आचार–व्यवहार तुम्हारे ही भिन्न–भिन्न रूपों के प्रति यथोचित रूप से व्यवहृत होने के कारण तुम्हारी पूजा के रूप में परिणत हो गये हैं।'

— महामाहेश्वर आचार्य अभिनवगुप्त

अखण्डसौभाग्यवती

श्रीमती राज रानी हांडा

जिनकी पुण्य स्मृति में भगवतीमहिषासुरमर्दिनी की प्रतिष्ठा एवं भगवतीमहिषासुरमर्दिनी प्रियतमम् ग्रन्थ का प्रकाशन हुआ है।

देवानुग्रह त्रिदशक महोत्सव

सौजन्य :

श्री शिवस्वरूप हांडा

सुपुत्र

श्री बलवंत राज हांडा

हांडा सोप फैक्ट्री, पहाड़ गंज, नई दिल्ली